# इकाई 2 महत्वपूर्ण कानून और ऐतिहासिक निर्णय

संरचना

सौम्या उमा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 संवैधानिक ढांचा

2.4 सामाजिक-आर्थिक अधिकारों का न्यायिक प्रवर्तन

2.5 कामगारों के अधिकारों को संरक्षित करने वाले कानून

2.6 कार्यस्थल पर जेंडर-विशिष्ट सुविधाएँ

2.7 कामगारों के लिए सामाजिक संरक्षण उपाय

2.7.1 संगठित क्षेत्र

2.7.2 असंगठित क्षेत्र

2.8 कामकाजी महिलाओं पर हुए ऐतिहासिक निर्णय

2.9 शिक्षा का अधिकार

2.10 खाद्य एवं पोषण सुरक्षा

2.11 सारांश

2.12 सन्दर्भ

2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

## 2.1 प्रस्तावना

एक कल्याणकारी राज्य होते हुए, भारत ने कई कानून, नीतियां, कार्यक्रमों और योजनाओं को लागू किया है जो गरीबों, हाशिये के लोगों और शोषितों-दलितों को सामाजिक संरक्षण सुनिश्चित करने का प्रयास करते हैं। न्यायालयों ने भी इन कानूनों के इस तरह अर्थ लगाए हैं कि उनका अर्थ, अभिप्राय और कार्यान्वयन में प्रभावशीलता व्यापक होती हो। यह इकाई उन तमाम कानूनों, नीतियों और महिलाओं तथा लड़कियों के लिए सामाजिक संरक्षण के मुद्दों से जुड़े ऐतिहासिक निर्णयों पर संक्षिप्त विवरण देने का प्रयास करती है।

## 2.2 उद्देश्य

इस इकाई के उद्देश्य हैं :

- सामाजिक संरक्षण पर संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करना;
- सामाजिक संरक्षण से संबंधित परिदृश्यों पर विभिन्न कानूनों और नीतियों पर चर्चा करना;
- संगठित और असंगठित क्षेत्रों के कार्यबल के लिए सामाजिक संरक्षण के प्रावधान में सरकारी प्रयासों का विश्लेषण करना;
- महिलाओं और लड़कियों के विशेष सन्दर्भ में ऐसे कानूनों, नीतियों और योजनाओं के महत्व को प्रदर्शित करना; और
- सामाजिक संरक्षण के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न निर्णयों और सामाजिक संरक्षण को वास्तविकता बनाने में उनके लाभप्रद मूल्य होने पर चर्चा करना।

अब हम उस संवैधानिक ढांचे के बारे में पढ़ेंगे जो भारत में सामाजिक संरक्षण को निर्दिष्ट करता है।

## 2.3 संवैधानिक ढांचा

### उद्देशिका

भारत का संविधान, अपनी उद्देशिका में, अपने नागरिकों के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय के साथ पदस्थिति और अवसरों की समानता प्रदान करने का भारतीय राज्य का संकल्प प्रदर्शित करता है।

### मौलिक अधिकार

संविधान का भाग 3 सभी लोगों को मूलभूत अधिकारों की गारण्टी देता है। इसमें जीवन का अधिकार (अनुच्छेद 21) और कानून के समक्ष समता और कानून के समान संरक्षण का अधिकार (अनुच्छेद 14) सम्मिलित है। समता के अधिकार के बाद धर्म, वंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर भेदभाव से प्रतिषेध का अधिकार (अनुच्छेद 15ए) आता है। भाग 3 में प्रत्याभूत मूलभूत स्वतंत्रताओं में भाषण और अभिव्यक्ति का अधिकार, शांतिपूर्वक सभा/सम्मेलन करने का अधिकार, संघ बनाने का अधिकार, कहीं भी आने जाने और कहीं भी बसने का अधिकार और किसी भी धर्म को मानने का अधिकार, कोई भी व्यवसाय, पेशा या व्यापार करने का अधिकार सम्मिलित हैं (अनुच्छेद 19)। ये अधिकार युक्तियुक्त निर्बन्धनों के तहत हैं जो राष्ट्र की सम्प्रभुता और अखण्डता, राष्ट्र की सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था, मर्यादा या नैतिकता के आधार पर लगाए जा सकते हैं। यदि राज्य कार्यकारिणी के कार्यों या अनुचित कानूनों के चलते इन मूलभूत अधिकारों में कोई कटौती होती है तो कोई भी नागरिक सीधे उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय जा सकता है। संविधान के प्रावधानों की अंतिम व्याख्या करने का आत्यंतिक अधिकार भी सर्वोच्च न्यायालय के पास है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित ऐसे कानून सभी प्राधिकारियों– कार्यकारी, न्यायिक और विधायी के लिए बंधनकारी और प्रवर्तनीय होते हैं।

मूलभूत अधिकारों के अध्याय में सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े और वंचित समूहों के लिए सकारात्मक कदमों की पहचान महत्वपूर्ण है। यद्यपि उपरिलिखित आधारों पर भेदभाव का निषेध है लेकिन यह निषेध राज्य को सकारात्मक कदम उठाने से नहीं रोकता।

**बॉक्स सं. 2.1**

> सकारात्मक कार्य का अर्थ है राज्य द्वारा धनात्मक कार्य जो भूतकाल में हाशिये और शोषित समूहों के लोगों के साथ किए गए भेदभावयुक्त बर्ताव, हानियों और अवसरों के वंचन का निराकरण करने और वर्तमान समय में अवसरों की समानता स्थापित करने के लिए किए जाते हैं।

राज्य द्वारा किया जाने वाला सकारात्मक कार्य महिलाओं और बच्चों, सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों (एससी) तथा अनुसूचित जनजातियों (एसटी) के लिए विशेष कानूनों के अधिनियमन के रूप में होता है। इसी प्रकार से सार्वजनिक रोजगार के मामलों में, जबकि संविधान अवसरों की समानता का सिद्धांत प्रस्तुत करता है, इसे राज्य द्वारा 'नागरिकों के किसी भी पिछड़े वर्ग के लिए, जो राज्य की दृष्टि में राज्य के अन्तर्गत आने वाले सेवाओं में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं करता' के पक्ष में विशेष कानूनों का अधिनियमन/आरक्षण के प्रावधान करके प्राप्त किया जा सकता है (अनुच्छेद 16 (4))

## राज्य नीति के निदेशक सिद्धांत

कई सामाजिक-आर्थिक अधिकार, जिनके बारे में इस इकाई में चर्चा की जाएगी, संविधान के भाग 4 के अन्तर्गत आते हैं। संविधान का भाग 4 राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों (डीपीएसपी) के बारे में बात करता है। निदेशक सिद्धांतों का लक्ष्य एक समतावादी समाज की स्थापना करना है जिसके नागरिक ऐसी सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक स्थितियों से दूर रहें जो उनकी अपनी क्षमता का पूर्ण उपयोग करने से रोकता है।

**बॉक्स सं. 2.2**

राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत संविधान के रचनात्मक भाग हैं, और ऐसे निदेश/नियम हैं जिनका देश के प्रशासन में राज्य द्वारा पालन किया जाना वांछनीय है। मूलभूत अधिकारों के विपरीत इन नीति निदेशक सिद्धांतों को किसी न्यायालय द्वारा प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। इसके बावजूद, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 37 में कहा गया है ये सिद्धांत देश के सरकारी प्रशासन में मूलभूत हैं और यह राज्य का कर्तव्य होगा कि कानून बनाते समय इन सिद्धांतों को अनुप्रयोग में लाए।

इसलिए भारतीय संविधान में भाग 4 मजबूत सामाजिक कार्यवृत्त की झलक देता है। संविधान के भाग 4 के प्रमुख प्रावधानों में सम्मिलित हैं :

- राज्य, लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करेगा जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करे और न केवल व्यक्तियों में बल्कि व्यक्ति के समूहों के बीच आय, स्थिति, सुविधाओं और अवसरों में असमानता को कम करेगा। (अनुच्छेद 38)।
- सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने के अधिकार की रक्षा हो; समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित सर्वोत्तम रूप से सधता हो; आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले जिससे धन और उत्पादन के साधनों का संग्रहण सार्वजनिक हित को नष्ट करने वाला न हो; बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं मिलें और बालकों तथा अल्पवय वयस्कों का शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से संरक्षण हो सके। (अनुच्छेद 39)।
- राज्य यह सुनिश्चित करे कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करेगा कि समान अवसर के आधार पर न्याय मिले और विशेषकर, उपयुक्त विधान या योजनाओं द्वारा या किसी अन्य तरीके से यह सुनिश्चित करे कि कोई भी नागरिक आर्थिक या अन्य अयोग्यता के कारण न्याय पाने से वंचित न रह जाए। (अनुच्छेद 39 ए)।
- राज्य को, अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं में रहते हुए ऐसे प्रभावी उपबंध करने हैं जिससे काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, वृद्धावस्था, बीमारी और निःशक्तता की दशा में लोक सहायता पाने के अधिकारों की रक्षा हो सके। (अनुच्छेद 41)।
- काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता हेतु प्रावधान करना। (अनुच्छेद 42)।
- राज्य उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य तरीके से कृषि, उद्योग या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, निर्वाह मजदूरी, शिष्ट जीवनस्तर और अवकाश का संपूर्ण उपभोग करने वाली काम की उपयुक्त दशाएं और सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और विशेषकर गांवों में कुटीर

उद्योगों को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने के प्रयासों का प्रावधान करे। (अनुच्छेद 43)।

- जनता के दुर्बल वर्गों के, विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और आर्थिक हितों को विशेष सावधानी से प्रोत्साहित करने और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करना। (अनुच्छेद 46)।
- लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने और लोक स्वास्थ्य को सुधारना (अनुच्छेद 47)।

## 2.4 सामाजिक-आर्थिक अधिकारों का न्यायिक प्रवर्तन

यह कतई आवश्यक नहीं है कि उपचारों या प्रतिकार के लिए विधि के न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होने से पूर्व मामला शुरू करने वाला व्यक्ति व्यक्तिगत तौर पर स्वयं पीड़ित हुआ/हुई हो। सामाजिक रूप से जागरूक व्यक्तियों और लोकहित की भावना से कार्य कर रहे एनजीओ को **जनहित याचिका (पीआईएल)** के रूप में एक अधिकार दिया गया है जिससे वे सार्वजनिक अत्याचार की शिकायतों के न्यायिक निवारण की मांग रखते हुए किसी जनहित के मुद्दे का समर्थन कर सकें। जनहित याचिकाओं द्वारा न्यायपालिका को भी अवसर प्रदान किए गए हैं कि वह संवैधानिक प्रावधानों का विवेचन कर सके और सामाजिक-आर्थिक अधिकारों को प्रवर्तित करा सके।

यद्यपि भारतीय न्यायालयों में राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों को सीधे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता, उच्चतर न्यायपालिका (सभी उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय) ने अपने तरीकों से, यह सुनिश्चित करने के नवाचारी उपाय ढूंढ लिए हैं कि ऐसे प्रावधानों को जो गरीबों, जरूरतमंदों और हाशिये पर छोड़ दिए गए वर्गों को सामाजिक संरक्षण प्रदान करते हों, उन्हें मजबूती प्रदान की जाए। जीवन के मूलभूत अधिकार, जो न्यायिक रूप से प्रवर्तनीय अधिकार हैं, के व्यापक अर्थान्वयन से न्यायपालिका ने निदेशक सिद्धांतों को प्रवर्तित न करा पाने की समस्या पर विजय पा ली है। अपने एक निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि अनुच्छेद 21 में विहित 'जीवन' शब्द में मात्र भौतिक या प्राणिमात्र की तरह अस्तित्व का भाव नहीं है, बल्कि ''कुछ अधिक को समाहित करता है'' (फ्रांसिस कोरेली मल्लिन बनाम दिल्ली संघ क्षेत्र और अन्य एआईआर 1981 एससी 746: 1981(1)एससीसी 608)। इसी निर्णय में आगे सर्वोच्च न्यायालय का मत है कि ''हम समझते हैं कि जीवन के अधिकार में मानवीय गरिमा और इसके लिए जो कुछ भी जरूरी हो के साथ जीना है यथा जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं जैसे कि पर्याप्त पोषण, वस्त्र और रहने के लिए आश्रय।'' इसी तरह के अन्य ऐतिहासिक निर्णयों द्वारा जीवन के अधिकार के व्यापक अर्थों में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, आश्रय का अधिकार, भोजन का अधिकार, जीविका का अधिकार, समान कार्य के लिए समान वेतन का अधिकार और विधिक सहायता पाने का अधिकार समाहित होते गए हैं।

आगे पढ़ने से पहले निम्न अभ्यास को हल करने का प्रयास करें।

**अपनी प्रगति की जाँच कीजिए**

1) भारतीय संविधान द्वारा प्रत्याभूत कुछ मौलिक अधिकारों के नाम लिखिए जो सामाजिक संरक्षण के मुद्दों के लिए प्रासंगिक हों।

2) संविधान में वर्णित सामाजिक नीति के कुछ उपयुक्त निदेशक सिद्धांतों के नाम लिखिए।

3) गरिमा के साथ जीवन के मौलिक अधिकार का व्यापक अर्थान्वयन करते हुए न्यायालय ने किन सामाजिक-आर्थिक अधिकारों को इसमें समाहित किया है?

अब हम देश में महिलाओं के मौलिक अधिकारों के संरक्षण हेतु राज्य द्वारा उठाए गए महत्वपूर्ण कदमों के बारे में पढ़ेंगे।

## महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001

भारतीय संविधान में प्रतिष्ठापित जेंडर समता के सिद्धांत ने महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभावकारी उपायों को अपनाने हेतु राज्य को अधिदेश प्रदान किया है। स्वतंत्रता के समय से ही भारतीय कानूनों, विकास नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों का उद्देश्य हर दशक में विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की प्रगति करना रहा है। राज्य द्वारा हाल में उठाए गए कदमों में से एक महिलाओं के सशक्तीकरण की रूपरेखा प्रदान करने के उद्देश्य हेतु महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001 का पल्लवन है।

नीति इस बात को स्वीकार करती है कि एक ओर संविधान, कानून, नीतियों, योजनाओं, कार्यक्रमों और संबंधित मशीनरियों में स्थापित महिलाओं की दशा और दूसरी ओर देश में महिलाओं की स्थिति की जमीनी हकीकत में व्यापक अंतर व्याप्त है। नीति में इसी अंतर के विश्लेषण को कई प्रपत्रों में संदर्भित किया गया है जैसे कि भारत में महिलाओं की स्थिति पर समिति की रिपोर्ट, ''समानता की ओर'', 1974, महिलाओं के लिए राष्ट्रीय भावी योजना 1988-2000, श्रमशक्ति रिपोर्ट 1988 और कार्यान्वय हेतु आधार, पांच वर्ष पश्चात – एक मूल्यांकन। नीति के लक्ष्य और उद्देश्यों में समाहित हैं:

- सकारात्मक आर्थिक और सामाजिक नीतियों के माध्यम से महिलाओं के पूर्ण विकास हेतु ऐसे वातावरण का निर्माण करना कि महिलाओं को उनकी पूर्ण क्षमता का एहसास करने हेतु सक्षम बनाया जा सके।
- जीवन के सभी– राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और नागरिक क्षेत्रों में पुरुषों के समान महिलाओं को भी सभी मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं के कानूनी और वास्तविक तौर पर आस्वादन के अवसर उपलब्ध हों।
- राष्ट्र के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन में निर्णयन और सहभागिता में महिलाओं की समान पहुंच होना।
- स्वास्थ्य रक्षा, सभी स्तरों पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, कॅरियर एवं व्यावसायिक मार्गदर्शन, रोजगार, समान वेतन, उपजीविकाजन्य स्वास्थ्य और सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा और सार्वजनिक कार्यालय इत्यादि तक महिलाओं की समान पहुंच होना।
- विकास प्रक्रिया में जेंडर परिप्रेक्ष्य को मुख्यधारा में समाहित करना।

महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण वाले भाग में नीति गरीबी उन्मूलन, गरीब महिलाओं की लामबंदी और ''उनकी क्षमताओं को बढ़ाने हेतु आवश्यक सहायता उपायों के साथ उन्हें आर्थिक और सामाजिक विकल्पों के विस्तार को प्रस्तुत करने'' पर ध्यान केन्द्रित करती है। उपभोग और उत्पादन के लिए ऋणों तक महिलाओं की पहुंच बढ़ाने के लिए नीति, वर्तमान में चल रहे सूक्ष्म-ऋण तंत्रों और सूक्ष्म-वित्त संस्थाओं को मजबूत करने और नई संस्थाओं की स्थापना की संभावनाओं पर विचार करती है।

नीति, वैश्वीकरण के जेंडर प्रभाव के चलते उभरने वाली नई चुनौतियों की पहचान भी करती है। यह स्वीकार करती है कि बढ़ती हुई वैश्विक अर्थव्यवस्था से होने वाले लाभ असमान रूप से वितरित हुए हैं जिससे आर्थिक विषमताएं और व्यापक हुई हैं, और प्रायः खराब होती कार्य की दशाओं और विशेष रूप से अनौपचारिक अर्थव्यवस्था और ग्रामीण क्षेत्रों में असुरक्षित कार्य वातावरण के चलते गरीबी का नारीवादीकरण हुआ है, जेंडर विषमता बढ़ी है। नीति ऐसी रणनीतियों पर जोर देती है जिनकी अभिकल्पना इस तरह से हो कि महिलाओं की क्षमता बढ़े और वैश्वीकरण की प्रक्रिया के चलते पड़ने वाले ऋणात्मक सामाजिक और आर्थिक प्रभावों का सामना करने हेतु उनका सशक्तीकरण हो सके।

महिलाओं के सामाजिक सशक्तीकरण वाले अनुच्छेद में नीति का ध्यान शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, पानी और स्वच्छता और आवास तथा आश्रय आदि पर केन्द्रित रहा है। इनके बारे में इसी इकाई में उपयुक्त शीर्षकों के अन्तर्गत चर्चा की जाएगी।

जबकि संविधान कानूनों और नीतियों के लिए जेंडर समानता के दृष्टिकोण से प्रतिपादित किए जाने के लिए ढांचा प्रदान करता है, उक्त नीति जेंडर विशिष्ट कार्यक्रमों और हस्तक्षेपों के साथ-साथ जेंडर को मुख्यधारा में लाने जैसे कदमों के माध्यम से महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु अधिक विस्तृत कार्ययोजना प्रस्तुत करती है। ये बातें जेंडरीकृत दृष्टिकोण से सामाजिक संरक्षण हेतु कानूनों, नीतियों और योजनाओं के अधिनियमन, निरूपण और क्रियान्वयन हेतु नींव तैयार करते हैं। आप इस नीति के बारे में इसी खण्ड की इकाई 4 में विस्तार से पढ़ेंगे।

### पंचवर्षीय रणनीतिक योजना 2011-16

महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने 2011-16 के लिए एक पंचवर्षीय रणनीतिक योजना निरूपित की। यह योजना महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001 को 'एक प्रगतिशील और भविष्योन्मुखी व्यापक रूपरेखा' के रूप में संदर्भित किया और इस राष्ट्रीय

नीति के क्रियान्वयन हेतु एक कार्ययोजना निरूपित करने का प्रस्ताव दिया। इस प्रक्रिया में, कार्ययोजना कुछ ऐसे अनुश्रवणीय संकेतक विकसित कर लेगी जो इसके क्रियान्वयन में सहायता करेगी। योजना, महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक सशक्तीकरण की योजनाओं जिसमें पोषण नीति समाहित हो, जैसे मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित रखती है।

## कार्य का अधिकार

2010 में 4 करोड़ बेरोजगार लोगों के साथ भारत ने तेजी से अनियंत्रित होती जा रही गरीबी और बेरोजगारी को देखा है, जबकि 2006 में 8.35 प्रतिशत और 2008 में 8 प्रतिशत बेरोजगारी दर की तुलना में 2010 में बेरोजगारी दर 9.4 प्रतिशत थी। गरीबी और बेरोजगारी की समस्या की नाजुक हालत ने तमाम नीति नियोजक कदमों के माध्यम से रोजगार सृजन करने हेतु राज्य द्वारा हस्तक्षेप की अतीव आवश्यकता दिखलाई। यह पांचवी पंचवर्षीय योजना का दौर था जब बेरोजगारी के खात्मे और गरीबी उन्मूलन को देश में आर्थिक नियोजन के प्रमुख उद्देश्यों के रूप में शामिल किया गया।

1970 से 1990 के दशकों तक भारतीय राज्य ने ग्रामीण विकास क्षेत्र में विशेष योजनाओं का निरूपण और क्रियान्वयन किया जिससे कि परिसंपत्ति निर्माण एवं रोजगार सृजन के माध्यम से बेरोजगारी और गरीबी की समस्याओं का सामना किया जा सके जैसे कि एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आईआरडीपी), ग्रामीण रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (आरएलईजीपी), जवाहर रोजगार योजना (जेआरवाई), इत्यादि। (अधिक विस्तार के लिए इस इकाई की तालिका 2.1 देखें)। इन सबके परिणामस्वरूप रोजगार सृजन में एक स्थिर वृद्धि हुई। वर्ष 1991 के दौरान आर्थिक सुधारों की शुरुआत और परिणामस्वरूप आर्थिक नियंत्रणों और व्यापार बाधाओं के उन्मूलन के साथ, यह विश्वास किया गया था कि इन सबके परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था का विस्तार होगा, वृद्धि दर उच्च होगी और इसलिए नए रोजगार अवसरों का सृजन होगा जो गरीबी और विषमता के स्तर को कम करेगा। हालाँकि साक्ष्य यह दिखलाते हैं कि नियमित श्रमिकों की अल्पकालिक पुनर्नियुक्ति अधिक हुई है जिसके परिणामस्वरूप श्रमबल के लिए संरक्षण के अवसर और स्वरूप बहुत कम होते गए।

**तालिका 2.1: रोज़गार सृजन कार्यक्रमों की एकझलक: 1970 से 1990 तक**

| प्रकार/श्रेणी | कार्यक्रम का नाम | आरम्भ वर्ष |
|---|---|---|
| स्वरोजगार कार्यक्रम | एग्रो सेवा केन्द्र | 1970 के दशक के आरम्भ में |
| | एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आईआरडीपी) | 1976-80 |
| | स्वरोजगार हेतु ग्रामीण युवाओं का प्रशिक्षण (ट्राइसेम) | 1979 |
| | ग्रामीण दस्तकारों को उन्नत औजारों की आपूर्ति (एसआईटीआरए) | |
| | शिक्षित बेरोजगार युवाओं के लिए स्वरोजगार योजना (एसईईयूवाई) | 1983-84 |
| | शहरी गरीबों के लिए स्वरोजगार कार्यक्रम (एसईपीयूपी) | 1986-87 |
| ग्रामीण मजदूरी रोजगार कार्यक्रम | लघु किसान विकास एजेंसी (एसएफडीए) | 1971 |

| | | |
|---|---|---|
| | सीमांत किसान एवं खेतिहर मजदूर योजना ग्रामीण श्रमशक्ति कार्यक्रम (आरएमपी) | 1971 |
| | महाराष्ट्र रोजगार गारण्टी योजना (एमईजीएस) | 1972-73 |
| | ग्रामीण रोजगार हेतु अकस्मात (क्रैश) योजना (सीएसआरई) | 1971 |
| | कार्य के बदले अनाज कार्यक्रम (एफएफडब्ल्यूपी) | 1977 |
| | राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एनआरईपी) | 1980 |
| | ग्रामीण श्रमिक रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (आरएलईजीपी) | 1983 |
| | ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों का विकास (ड्वकरा) | 1982-83 |
| | जवाहर रोजगार योजना (जेआरवाई) (ग्रामीण कार्यों का 1989-90 में शुरू कार्यक्रम जिसमें एनआरईपी और आरएलईजीपी को मिला दिया गया।) | 1989-90 |
| शहरी गरीबों के लिए रोजगार कार्यक्रम | नेहरू रोजगार योजना | 1989 |
| | शहरी क्षेत्रों में रोजगार सृजन हेतु शिक्षित बेरोजगारों हेतु योजना | |
| विशेष क्षेत्र विकास कार्यक्रम | सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम (डीपीईपी) | 1973 |
| | मरुभूमि विकास कार्यक्रम (डीडीपी) | 1977-78 |
| | पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम (एचएडीपी) | 1974 |
| | कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम (सीएडीपी) | 1974-75 |

केन्द्र सरकार द्वारा शुरू किए गए इन राष्ट्रीय-स्तर के कार्यक्रमों के अतिरिक्त बाहरी सहायता और उसके बिना भी तमाम एनजीओ और स्वयंसेवी संगठनों ने भी सूक्ष्मस्तर पर प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किए हैं। इन कार्यक्रमों का मुख्य जोर आय-अर्जन क्षमताओं का विकास करना और उनके कल्याणार्थियों को स्वयं सामर्थ्य प्रदान करने पर रहा है।

तेजी से फैलती हुई गरीबी और भारी मात्रा में बेरोगारी के सन्दर्भ में बढ़ती हुई नीतिगत प्रतिक्रिया में एक ओर समावेशी वृद्धि पर और दूसरी ओर अधिकारों के दौर से लगाव पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम (आगे से इसे सिर्फ नरेगा कहा जाएगा) का अस्तित्व इसी समावेशी विकास और राज्य की नीतियों में उग्रसुधारवाद के रूप में, इसकी दायित्वों को कानूनी शक्ति प्रदान करने के साथ, सामने आया है।

### राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम (नरेगा) 2006

2006 में पारित नरेगा के कई उद्देश्य हैं, और इसे सामाजिक संरक्षण के माध्यम के रूप में

स्थानीय विकास को प्रेरित करने में एक हस्तक्षेप के तौर पर देखा जाता है। इसके अपेक्षित परिणामों में शामिल हैं :

- रोजगार और क्रयशक्ति में वृद्धि
- कार्यबल में महिलाओं की सहभागिता
- स्थायी परिसंपत्तियों के निर्माण द्वारा ग्रामीण अवसंरचना को मजबूती प्रदान करना और प्राकृतिक संसाधनों को पुनरुज्जीवित करना जो स्थानीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था को आजीविका संसाधन आधार प्रदान करती है
- उत्पादकता में वृद्धि
- संकटकालीन या विपत्तिकारी प्रवसन में कमी

यह अधिनियम प्रत्येक ग्रामीण परिवार के लिए, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल दस्ती कार्य करने को इच्छुक हों, प्रतिवर्ष न्यूनतम 100 दिनों के सवेतन कार्य की गारण्टी देता है। इस प्रकार से यह ग्रामीण परिवारों के लिए आजीविका सुरक्षा को सुधारने की संभावनाओं पर विचार करता है। इस कानून की योजना के अनुसार किसी भी ग्रामीण परिवार के वयस्क सदस्य जो अकुशल दस्ती कार्य करने को इच्छुक हों स्थानीय ग्राम पंचायत में पंजीकरण हेतु लिखित या मौखिक आवेदन कर सकते हैं, और बदले में उन्हें एक जॉब कार्ड जारी किया जाएगा। **यह जॉब कार्ड दरअसल एक मूलभूत कानूनी दस्तावेज है जो ग्रामीण परिवार को काम मांगने में सक्षम बनाता है।** इसके अतिरिक्त इसमें एक समयबद्ध गारण्टी है। राज्य प्रशासन को काम मांगने के 15 दिनों के अन्दर काम प्रदान करना होगा, इसमें असफल रहने पर राज्य द्वारा अपनी कीमत पर उसे बेरोजगारी भत्ता प्रदान किया जाएगा। कानून के माध्यम से राज्य यह भी गारण्टी देता है कि वह कार्य गांव के 5 किलोमीटर के घेरे के भीतर प्रदान करेगा अन्यथा असफल रहने पर 10 प्रतिशत अतिरिक्त मजदूरी का भुगतान करेगा। मजदूरियों का भुगतान तत्समय अधिसूचित मजदूरी दर पर किया जाएगा और यह भी प्रावधान है कि भुगतान साप्ताहिक आधार पर किया जाएगा और किसी भी दशा में पाक्षिक आधार से अधिक दिनों में नहीं। कानून द्वारा यह भी प्रावधान है कि कार्यस्थल पर शिशुगृह, पीने का पानी, प्राथमिक चिकित्सा सहायता और छायादार आश्रय होगा। इस प्रावधान द्वारा कि काम पर रखे गए लोगों में से कम से कम एक तिहाई महिलाएं होनी चाहिए, और काम देने में वंचित समूहों जैसे कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों को प्राथमिकता दी जाएगी, यह समानता को भी बढ़ावा देता है।

नरेगा, अपने क्रियान्वयन की अधिकांश जिम्मेदारी पंचायतों (ग्राम समितियों) पर डालता है। कानून प्रशासन की विकेन्द्रीकृत प्रणाली की संभावनाओं पर विचार करता है जिसमें स्थानीय समुदाय ग्राम सभाओं (स्थानीय निर्वाचक सूची में नामित लोगों की स्थायी संस्था जो पंचायत योजनाओं का निरीक्षण करती है) के माध्यम से स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परियोजनाओं का निर्माण कर सकते हैं, जिससे कि नरेगा के कार्यों में ग्राम प्राथमिकताओं की झलक मिल सके। 2010-11 में अधिनियम 615 जिलों में विस्तृत हो चुका है और लगभग 29 अरब मानव दिवस रोजगार प्रदान किए हैं।

सार्वजनिक निर्माण के माध्यम से मजदूरी आधारित पूर्व के सभी रोजगार कार्यक्रमों का विलय अब नरेगा में कर दिया गया है। इस तरह नरेगा पूर्व के सार्वजनिक निर्माण आधारित कार्यक्रमों पर बना हुआ है जिसमें शामिल हैं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम 1980-89; ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम 1983-9; जवाहर रोजगार योजना 1989-99; रोजगार आश्वासन योजना 1993-9; जवाहर ग्राम समृद्धि योजना 1992-2002; सम्पूर्ण

ग्रामीण रोजगार योजना सितंबर 2001; राष्ट्रीय काम के बदले अनाज योजना 2004 (नरेगा का प्रणेता) और महाराष्ट्र रोजगार गारण्टी योजना। इस खण्ड की इकाई 3 में समीक्षात्मक रूप से इस बात की जांच की गयी है कि किस हद तक राज्य ने कानून के अन्तर्गत अपने कर्तव्यों का पालन किया है और विधिक प्रावधानों के क्रियान्वयन के प्रभावशीलता की जांच भी की जाएगी।

**जेंडर और नरेगा :** नरेगा की संभावना एक जेंडर संवेदनशील कानून के तौर पर की गई थी। यह कार्यस्थलों पर शिशुगृहों के प्रावधान की बात करता है, इस बात पर जोर देता है कि सभी सहभागियों में एक तिहाई महिलाएं हों और लैंगिक आधार पर मजदूरी में कोई भेदभाव न किया जाए। निर्देशों में बिल्कुल स्पष्टतया लिखा गया है कि समान कार्य के लिए महिलाओं और यह पुरुषों को समान वेतन दिया जाएगा और यह समान पारिश्रमिक अधिनियम के प्रावधानों के अनुपालन में होगा। यह भी अपेक्षा की गई थी कि स्थानीय निरीक्षण/सतर्कता समिति में महिलाओं को प्रतिनिधित्व मिले जो कार्यों के निरीक्षण के लिए बनाई जाती हैं जिससे कि परियोजनाओं के प्रबंधन में महिलाओं की भूमिका का मार्ग प्रशस्त हो। यह भी अपेक्षा की गई है कि वर्ष में दो बार होने वाली सामाजिक ऑडिट की प्रक्रियाओं में भी महिलाएँ सहभागी बनें। अधिनियम में एकल महिला को भी 'परिवार' के तौर पर पहचान दी गई जिससे कि विधवा/परित्यक्त/तलाकशुदा/निराश्रित और एकल महिलाओं की अन्य श्रेणियां भी इस अधिनियम का लाभ उठा सकें।

## 2.5 कामगारों के अधिकारों को संरक्षित करने वाले कानून

श्रम कानूनों का लक्ष्य होता है कार्यस्थल पर कामगारों के अधिकारों का संरक्षण करना और उसे प्रोत्साहन देना। महिलाओं के अधिकारों के लिए श्रम कानूनों के प्रावधानों का ध्यान कारखानों और अन्य कार्यस्थलों पर महिलाओं की सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण में सुधार, न्यूनतम मजदूरी, समान कार्य के लिए समान वेतन, मातृत्व लाभ, बच्चों के देखभाल की सुविधाएं, पर्याप्त आराम और अवकाश के प्रावधान, कार्य स्थल पर भेदभाव और यौन उत्पीड़न से बचाव पर केन्द्रित होता है। कई श्रम कानून संविधान में वर्णित सिद्धांतों और निदेशों के विस्तार हैं। उदाहरण के लिए, समान कार्य के लिए समान वेतन वाला अनुच्छेद समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 के अधिनियमित होने का कारण बना। काम की मानवीय और न्यायशील परिस्थितियों पर जोर फैक्ट्री अधिनियमों और श्रम कानूनों में कई प्रावधानों का आधार बना जिससे महिलाओं के लिए, अलग शौचालय का प्रावधान, शिशु गृहों का प्रावधान और खतरनाक या दुष्कर जॉब्स या रात वाली पालियों में महिलाओं के नियोजन पर निषेध जैसे प्रावधानों को अन्तर्भूत किया जा सका। मातृत्व राहत के लिए राज्य के निदेश प्रावधान के चलते मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 का अधिनियमन हुआ। कार्य स्थलों पर महिलाओं की संरक्षा करने वाले श्रम कानूनों में शामिल हैं:

- समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 - यह समान या मिलते जुलते कामों के लिए पुरुषों तथा महिलाओं को समान पारिश्रमिक का प्रावधान करता है और सेवा शर्तों और भर्ती में भेदभाव का निषेध करता है सिर्फ उन स्थानों को छोड़कर जहां कानून द्वारा महिलाओं के नियोजन का निषेध या सीमित किया गया हो।
- मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 - मातृत्व की गरिमा का संरक्षण करने के लिए तथा जेंडर न्याय के लिए मातृत्व अवकाश और लाभ का प्रावधान करता है।
- कारखाना अधिनियम, 1948 - कार्यस्थल पर महिलाओं के संरक्षण हेतु अधिनियम में कई प्रावधान हैं, जिसमें व्यावसायिक सुरक्षा से संबंधित मुद्दे, स्वच्छता और शिशुगृह सुविधाओं से संबंधित प्रावधान शामिल हैं।

- खान अधिनियम, 1952 - यह भूमिगत स्थलों में महिलाओं के नियोजन को निषिद्ध करता है और भूमि के ऊपर भी महिलाओं के कार्य समयावधि को सीमित करने का प्रावधान करता है।
- मजदूरी का भुगतान अधिनियम, 1936 और न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 - नियमित और समयबद्ध मजदूरी के भुगतान का प्रावधान करता है; उद्यम मजदूरी बोर्डों को प्रत्येक उद्यम के लिए मजदूरी संरचना को निर्धारित करने का अधिदेश देता है। निर्धारित न्यूनतम मजदूरी से कम भुगतान की बिल्कुल मनाही है।
- कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम, 1923 - पूर्व में कामगार मुवाअजा अधिनियम के नाम से जाना जाने वाला यह अधिनियम औद्योगिक दुर्घटनाओं और विकलांगता या मृत्यु के लिए उत्तरदायी व्यावसायिक बीमारियों से कर्मचारियों को क्षतिपूर्ति प्रदान करने का प्रावधान करता है।
- औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 - यह कानून नौकरी से निकाले जाने, छंटनी के समय क्षतिपूर्ति दिए जाने, श्रमिक-प्रबंधन विवादों और अनुचित श्रमिक व्यवहारों को समाहित करता है; इस कानून से संबंधित मामलों की सुनवाई श्रम न्यायालय और औद्योगिक न्यायाधिकरणों में होती है।
- ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम, 1972 - यह कानून एक निश्चित सीमा से कम कमाने वाले कर्मचारियों को सेवा से निष्कासन के समय ग्रेच्युटी के भुगतान का प्रावधान करता है।
- कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम - उन अधिकांश स्थापनाओं पर लागू होता है जहां कम से कम 20 कामगार कार्य करते हैं। नियोक्ता और कर्मचारी दोनों कर्मचारी के मूल वेतन और मंहगाई भत्ते के 10-12 प्रतिशत तक का योगदान करते हैं। नियोक्ता के योगदान से कुछ निश्चित राशि को पेंशन कोष में जमा करा दिया जाता है। जिससे चार मुख्य प्रकार की पेंशन प्रदान की जाती है। सेवानिवृत्ति पर या विकलांगता पर मासिक पेंशन; सेवा में रहते हुए मृत्यु होने पर विधवा मासिक पेंशन; बच्चे के लिए मासिक पेंशन; और अनाथ के लिए मासिक पेंशन।
- बाल श्रम (निषेध और नियमन) अधिनियम, 1986 - यह कानून खतरनाक व्यवसायों में बाल श्रम को निषिद्ध करता है और गैर-खतरनाक व्यवसाय में कार्य की शर्तों का नियमन करता है।

**बॉक्स सं. 2.3**

कामगारों के अधिकारों से संबंधित अन्य कानून जो महिलाओं को लाभ पहुंचाते हैं – इसमें बंधुआ मजदूरी प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम 1976, बागवानी श्रम अधिनियम 1951, औद्योगिक रोजगार (स्थायी आदेश) अधिनियम 1946, व्यापार संघ अधिनियम 1926, बोनस भुगतान अधिनियम 1955, व्यक्तिगत क्षति (मुआवजा बीमा) अधिनियम 1963, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948, अन्तर राज्य प्रवासी कामगार (रोजगार का नियमन) सेवा की शर्तें अधिनियम 1979, और संविदा श्रमिक (निषेध और नियमन) अधिनियम 1970।

संवैधानिक प्रावधानों और श्रम कानूनों के अतिरिक्त भारत ने कई अंतर्राष्ट्रीय संधियों की अभिपुष्टि की है जो कार्यस्थल पर महिलाओं के अधिकारों पर प्रत्यक्ष रूप से केन्द्रित हैं या इसके लिए प्रावधान करते हैं। अभिपुष्टि के माध्यम से ऐसे अंतर्राष्ट्रीय मानक भारत पर भी लागू होते हैं। ऐसी संधियों में शामिल हैं:

- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन भूमिगत कार्य (महिला) संधि, 1935 (संख्या 45) की अभिपुष्टि 25.03.1938 को की।

- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन रात्रिकालीन कार्य (महिला) (संशोधित) संधि, 1948; और प्रोटोकॉल, 1990 (संख्या 89) की अभिपुष्टि 27.02.1950 को की।
- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन समान पारिश्रमिक संधि, 1951 (संख्या 100) की अभिपुष्टि 25.09.1958 को की।
- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन भेदभाव (रोजगार और व्यवसाय) संधि, 1958 (संख्या 111) की अभिपुष्टि 03.06.1960 को की।
- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन रोजगार नीति संधि, 1964 (संख्या 122) की अभिपुष्टि 17.11.1998 को की।
- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन बेंजीन संधि, 1971 (संख्या 136) की अभिपुष्टि 11.06.1991 को की।
- अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ग्रामीण कामगार संगठन संधि, 1975 (संख्या 141) की अभिपुष्टि 18.08.1977 को की।
- महिलाओं के विरुद्ध सभी स्वरूपों के भेदभाव के उन्मूलन पर संयुक्त राष्ट्र संधि (सीईडीएडब्ल्यू), 1979 की अभिपुष्टि 09.07.1993 को की।
- आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र अनुबंध, 1966 (आईसीईएससीआर) को 10.04.1979 को स्वीकार किया गया।
- नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र अनुबंध, 1966 (आईसीसीपीआर) को 10.04.1979 को स्वीकार किया गया।
- महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संधि, 1953 की अभिपुष्टि 01.11.1961 को की।

## 2.6 कार्यस्थल पर जेंडर-विशिष्ट सुविधाएँ

कार्यस्थलों की अभिकल्पना परंपरागत तौर पर पुरुषों को ध्यान में रखकर की गई थी जिसमें लंबी अवधि तक काम करने और कार्य के प्रति पूर्ण प्रतिबद्धता की अपेक्षाएं सर्वप्रमुख थीं। ऐसे व्यवहारों ने युवा माताओं को प्रतियोगी जॉब्स और कॅरियर पाने में रुकावट डाली, बच्चों के जनन की अवधि में उन्हें पारिश्रमिक आधारित काम से बाहर कर दिया जाता था क्योंकि कार्यस्थलों पर बच्चों के देखभाल से संबंधित और अन्य जेंडर-अनुकूल सहायताओं की कमी रहती थी। इसी संदर्भ में कानूनों और नीतियों ने कार्यस्थलों पर जेंडर-विशिष्ट सुविधाओं को प्रदान करने के लिए प्रावधान किए जिससे कि महिलाओं के लिए काम के/आजीविका के अधिकार को वास्तविकता बनाया जा सके।

कार्यस्थल पर जेंडर विशिष्ट सुविधाओं में मातृत्व लाभ के अतिरिक्त धुलाई और अलग से शौचालय सुविधाओं, क्रेच और डे केयर सेंटरों की सुविधा, स्तनपान के लिए छुट्टी का प्रावधान शामिल हैं। उदाहरण के लिए, बीड़ी और सिगार कामगार (रोजगार की स्थितियां) अधिनियम, कर्मचारी भविष्य निधि और परिवार पेंशन अधिनियम, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, कारखाना अधिनियम, दुकानें और स्थापना अधिनियम इत्यादि ऐसे कानून हैं जो वेतन, छुट्टी, काम के घंटे, अवकाश हेतु अंतराल, ओवरटाइम और खतरनाक स्थितियों में काम पर रोक आदि के बारे में नियमों के प्रावधान करते हैं। ऐसे अधिकांश कानूनों में रात्रिकालीन कार्यों में महिलाओं का नियोजन पूरी तरह प्रतिषिद्ध है। हालाँकि 2005 में कारखाना अधिनियम का संशोधन किया गया जिससे कि रात्रिकालीन पाली (रात 10 बजे से सुबह 6 बजे तक) में जब तक नियोक्ता महिलाओं के लिए पर्याप्त सुरक्षा उपाय करे तो

महिलाओं को काम की अनुमति दी जा सके। कानूनों में ऐसे प्रावधानों की व्यवस्था की गई है कि जहां भी 30 से अधिक महिलाएं नियोजित हों वहां पर शिशुगृह (क्रेच) की व्यवस्था हो साथ ही उसमें शिशुगृह चलाने के समुचित दिशा निर्देश भी हैं। संविदा पर कार्य करने वाली महिला मजदूर और अन्तर राज्यीय प्रवास करने वाली महिला मजदूरों के लिए शिशुगृह और आराम करने के जगहों की सुविधाएं विभिन्न संगत कानूनों में प्रावधानित हैं।

शिक्षा के लिए राष्ट्रीय नीति 1986 में, बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति 1994 में, महिला सशक्तीकरण के लिए राष्ट्रीय नीति 2001 और बच्चों के लिए राष्ट्रीय कार्ययोजना 2005 में भी बच्चों की देखभाल से संबंधित सेवाओं की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम 2005 में शिशुगृहों के प्रावधान को अनिवार्य बनाया गया है। अगस्त 2006 में महिला और बाल विकास मंत्रालय ने घोषणा की कि वह एक ऐसा कानून लाएगा जो सार्वजनिक और निजी संगठनों के लिए अनिवार्य कर देगा कि वह अपने यहां काम करने वाली युवा माताओं को शिशुगृह और डे केयर केन्द्रों की सुविधाएं प्रदान करें। उसी के अनुरूप इसने कामकाजी माताओं के बच्चों के लिए राजीव गांधी राष्ट्रीय शिशुगृह योजना का निरूपण किया। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि छोटे बच्चों की देखभाल से संबंधित जेंडर विशिष्ट सुविधाओं को सिर्फ महिलाओं के कार्यस्थलों पर प्रदान कर और पिता के कार्यस्थलों पर ऐसी सुविधाओं को प्रदान न करके सरकार एक तरह से उसी सांस्कृतिक आदर्श को और मजबूत कर रही है तथा उसे वैधता प्रदान कर रही है कि बच्चों की देखभाल करना अकेले सिर्फ महिलाओं का दायित्व है। ऐसा न करके सरकार उस परंपरागत सांस्कृतिक आदर्श को प्रश्रय देने से बच सकती थी।

एक बार फिर से समय आ गया है कि आगे बढ़ने से पहले पिछले कुछ अनुभागों की समझ का आंकलन आप निम्न अभ्यास के माध्यम से करें।

**अपनी प्रगति की जाँच कीजिए**

1) महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001 और 2011-16 तक एक पंचवर्षीय रणनीतिक योजना का क्या महत्व है?

2) शोषित, वंचित लोगों के लिए सरकार द्वारा शुरू की गयी अन्य रोजगार सृजन योजनाओं से नरेगा किस तरह से भिन्न है?

3) नरेगा को एक जेंडर-संवेदनशील कानून क्यों समझा जाता है?

4) कार्य स्थलों पर महिलाओं का संरक्षण करने वाले कुछ श्रम कानूनों के नाम लिखिए।

5) कार्यस्थल पर प्रदत्त कुछ ऐसी जेंडर-विशिष्ट सुविधाओं के नाम लिखिए जिसकी हकदार महिलाएं विभिन्न कानूनों, योजनाओं और न्यायिक निर्णयों से हुई हैं?

नीचे के अनुभागों में आप संगठित क्षेत्र में कामगारों के लिए सामाजिक संरक्षण उपायों के बारे में पढ़ेंगे।

## 2.7 कामगारों के लिए सामाजिक संरक्षण उपाय

### 2.7.1 संगठित क्षेत्र

कार्यबल के संगठित क्षेत्र में केन्द्र और राज्य दोनों सरकारों द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले विभिन्न रोजगारों के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 के तहत मजदूरी की न्यूनतम दर निर्धारित करने के अतिरिक्त केन्द्र सरकार **न्यूनतम मजदूरी के न्यूनतम राष्ट्रीय**

**स्तर** (एनएफएलएमडब्ल्यू) को समय-समय पर संशोधित करते हुए निर्धारित करती है। वर्तमान समय में 1 अप्रैल 2011 से लागू यह प्रतिदिन 115.00 रूपये निर्धारित है। हालाँकि यह गैर-सांविधिक है, राज्य सरकारों को सलाह दी जाती है कि उनके किसी भी अधिसूचित रोजगारों में न्यूनतम मजदूरी न्यूनतम राष्ट्रीय स्तर (एनएफएलएमडब्ल्यू) से कम कतई न हो (पिल्लई, 2011)। इसके अतिरिक्त विभिन्न कानूनों के माध्यम से सामाजिक संरक्षण प्रदान किया जाता है जैसे कि:

- ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम, 1927 : यह विभिन्न स्थापनाओं में कर्मचारियों को अनिवार्य ग्रेच्युटी भुगतान का प्रावधान करता है।
- कर्मचारी क्षतिपूर्ति अधिनियम, 1923: पूर्व में कामगार क्षतिपूर्ति अधिनियम के नाम से जाना जाने वाला यह कानून नियोक्ताओं पर यह बंधन डालता है कि रोजगार के दौरान और उसके कारण होने वाले किसी भी दुर्घटना के लिए कर्मचारियों को क्षतिपूर्ति प्रदान करे।
- मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961: अधिनियम सवेतन मातृत्व अवकाश इत्यादि प्रदान करते हुए महिलाओं के कल्याण को प्रोत्साहित करता है।
- बागान श्रमिक अधिनियम, 1951: यह बागान कामगारों को प्रदान किए जाने वाले कल्याणकारी सुविधाओं के बारे में प्रावधान करता है और इसे सुरक्षा तथा व्यावसायिक स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने के लिए संशोधित किया गया है।
- कर्मचारी राज्य बीमा (ईएसआई) अधिनियम, 1948: यह बीमारी, मातृत्व और रोजगारजनित क्षतियों के लिए स्वास्थ्य देखभाल और नकद लाभ प्रदान करता है। इस अधिनियम का संशोधन योजना के अन्तर्गत सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार के लिए किया गया है और ईएसआई अवसंरचना को सक्षम बनाया गया है कि असंगठित क्षेत्र के कामगारों को भी स्वास्थ्य देखभाल प्रदान कर सके।
- कर्मचारी भविष्य निधि और विविध प्रावधान अधिनियम, 1952: यह अधिनियम कारखानों और अन्य स्थापनाओं में काम करने वाले कर्मचारियों के लिए भविष्य निधि, पेंशन निधि और जमा आधारित बीमा निधियों को स्थापित किए जाने की व्यवस्था करता है।
- राजीव गांधी श्रमिक कल्याण योजना: छंटनी, नौकरी से हटाए जाने, तालाबंदी और आंशिक विकलांगता के चलते बेरोजगार होने वाले बीमित कामगारों को सामाजिक सुरक्षा जाल प्रदान करने की योजना है। इसका क्रियान्वयन ईएसआई निगम द्वारा किया जाता है जिसमें वह एक साल की अवधि के लिए मजदूरी और चिकित्सा लाभों का आधा प्रदान करता है।

अब हम उन उपायों के बारे में पढ़ेंगे जो असंगठित क्षेत्र में कामगारों का संरक्षण करते हैं।

## 2.7.2 असंगठित क्षेत्र

### अनौपचारिक क्षेत्र

चूंकि असंगठित क्षेत्र में कामगारों की अधिकांश संख्या महिलाओं की है अतः असंगठित क्षेत्र के श्रमबल के लिए लागू होने वाले सामाजिक संरक्षण उपाय महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु अधिक प्रासंगिक हैं। सुदर्शन (2009) लिखते हैं कि असंगठित/ अनौपचारिक क्षेत्र में कामगारों के सामाजिक सुरक्षा समस्याओं को दो समूहों में विभाजित किया जा सकता है:

अ) ऐसी समस्याएं जो जनसंख्या के गरीब वर्गों के वंचन से उपजती हैं जैसे कि अपर्याप्त रोजगार, कम आमदनी, निम्न स्वास्थ्य और शैक्षणिक स्थिति; और

ब) दूसरी ऐसी समस्याएं जो आकस्मिकताओं का सामना करने के लिए अपर्याप्त सुरक्षा उपायों के कारण उपजती हैं जैसे कि बीमारी, दुर्घटना, मृत्यु और वृद्धावस्था।

यह तथ्य कि असंगठित/ अनौपचारिक क्षेत्र में सामाजिक रूप से पिछड़े समुदायों से आने वाले बहुसंख्या के कामगार इन कामगारों की प्रकृति में कुछ निश्चित सामाजिक आयाम दिखलाते हैं। यही कारण था कि असंगठित क्षेत्र में उपक्रमों पर राष्ट्रीय आयोग (एनसीईयूएस) ने अपनी मई 2006 की रिपोर्ट में सिफारिश की है कि उन अर्थों में सामाजिक सुरक्षा के उपायों को भी सामाजिक उत्थान के एक स्वरूप के तौर पर देखा जाना चाहिए।

असंगठित क्षेत्र में कामगारों के लिए मुख्य उपागम यह है कि क्षेत्र-विशिष्ट कल्याण निधियों की स्थापना की जाए (साधारणतया प्रकृति में त्रिदलीय जिसमें सरकार, नियोक्ता और कामगार के योगदान हों)। ऐसी कल्याण निधियां अंशदायी और कर-आधारित योजनाओं दोनों को समाहित करती हैं। कर आधारित योजनाओं की स्थापना भारत सरकार द्वारा बीड़ी कामगारों, खनन कामगारों, सिनेमा और विनिर्माण से संबंधित कामगारों के लिए किया जाता है। इस कल्याण निधि के माध्यम से कामगारों की पहुंच चिकित्सा सेवाओं तक, अपने बच्चों की शिक्षा तक और सामाजिक सहायता के अन्य निर्धारित स्वरूपों तक होती है। स्वास्थ्य बीमा योजनाएं जैसे कि **राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना (आरएसबीवाई)**, **आम आदमी बीमा योजना (एएबीवाई)** जो ग्रामीण भूमिहीन परिवारों के लिए मृत्यु और दुर्घटना बीमा कवर प्रदान करता है और असंगठित कामगारों की विभिन्न श्रेणियों के लिए कल्याण निधि और योजनाओं के माध्यम से उनके लिए बहुप्रतीक्षित सामाजिक संरक्षण प्रदान करती हैं।

असंगठित क्षेत्र में कामगारों के कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए 2008 में असंगठित कामगार सामाजिक सुरक्षा अधिनियम को अधिनियमित किया गया। यह कानून राज्य को जीवन और विकलांगता कवर, स्वास्थ्य और मातृत्व लाभ, वृद्धावस्था संरक्षण और कोई अन्य लाभ जो भी निर्धारित किया जाए को प्रदान करने के लिए योजनाएं निरूपित करने के लिए अधिदेश प्रदान करता है। इस खण्ड की इकाई 3 में इस कानून के क्रियान्वयन की समीक्षात्मक तौर पर जांच की जाएगी और उन चुनौतियों से भी रूबरू हुआ जाएगा जो इसके क्रियान्वयन के दौरान आई हैं।

## 2.8 कामकाजी महिलाओं पर हुए ऐतिहासिक निर्णय

आप इसके बारे में पहले ही एमडब्ल्यूजी-002 के खण्ड 4 की इकाई 3 के अन्तर्गत पढ़ चुके हैं। यहां हम उनके बारे में और विस्तार से चर्चा करेंगे।

समानता और गैर-भेदभाव के बारे में संवैधानिक प्रत्याभूति के चलते नियुक्तियों, प्रोन्नतियों, निष्कासनों और कार्य की स्थितियों में भेदभावपरक व्यवहारों को अवैध या गैर कानूनी घोषित किया जा सका है। सी. बी. मुथम्मा आईएफएस बनाम भारत संघ के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय विदेश सेवा के उन नियमों को असंवैधानिक घोषित कर दिया था जो विवाहित महिलाओं के विरुद्ध विभेदकारी थे। एयर इंडिया बनाम नारगेश मीरजा मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने नियमों के उन प्रावधानों को स्वेच्छाचारी और सभ्य समाज के लिए घृणित प्रतीक कहकर खारिज कर दिया था जिसके तहत एक एयर होस्टेस को उसके पहले गर्भधारण पर नौकरी से निकाल दिया गया था। रणधीर सिंह बनाम भारत संघ के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने स्थापित किया कि यद्यपि 'समान कार्य के लिए समान वेतन' के सिद्धांत को अभिव्यक्त रूप से हमारे संविधान द्वारा मौलिक अधिकार घोषित नहीं किया गया है परन्तु संविधान के अनुच्छेद 14, 16 और 39 (ग) के अन्तर्गत यह निश्चित रूप से संवैधानिक लक्ष्य है। इसलिए इस अधिकार को अतार्किक वर्गीकरण के आधार पर

असमान वेतनमानों के मामलों में लागू कराया जा सकता है। बाद में कई मामलों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस निर्णय का अनुपालन किया गया।

मेसर्स मैककिनन मैकेंजी और कं. लि. बनाम ऑड्रे डीकोस्टा और अन्य के मामले में जहां महिला स्टेनोग्राफरों को पुरुष स्टेनोग्राफरों की तुलना में कम वेतनमान दिया जाता था, सर्वोच्च न्यायालय ने स्थापित किया कि विभेदकारी वेतनमान संवैधानिक प्रावधानों और समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 के प्रावधानों का उल्लंघन करते हैं।

**बॉक्स सं. 2.4**

महिलाओं के लिए सकारात्मक कार्यों पर संवैधानिक प्रावधानों के अनुपालन में महिलाओं के लिए नगरपालिकाओं, शैक्षणिक संस्थानों, सार्वजनिक रोजगारों और पंचायतों में महिलाओं के लिए सीटों को आरक्षित किया गया है। महिला उद्यमियों के लिए सुलभ ऋण और कर छूटों के प्रावधान किए गए हैं। कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के संदर्भ में जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की गारण्टी प्रयुक्त होती है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने इसके निरोध और उसके निवारण हेतु दिशानिर्देश जारी किए हैं।

न्यायपालिका ने व्यावसायिक स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए गहरी चिंता प्रकट की है। उपभोक्ता शिक्षा और अनुसंधान केन्द्र बनाम भारत संघ के मामले में जो एसबेस्टस विनिर्माण उद्योग में काम की दशाओं और कर्मचारियों पर स्वास्थ्य प्रभावों की बात है, सर्वोच्च न्यायालय ने स्थापित किया है कि किसी कामगार के स्वास्थ्य का अधिकार मूलतः उसके अर्थपूर्ण जीवन के अधिकार का अंगभूत पहलू है।

बंधुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारत संघ में सर्वोच्च न्यायालय ने हरियाणा में पत्थर कटाई उद्योग से बंधुआ मजदूरों की रिहाई का मसला गौर से देखा था। पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम भारत संघ में सर्वोच्च न्यायालय ने फिर से दोहराया कि राज्य इस संवैधानिक दायित्व से बंधा हुआ था कि वह देखे कि किसी भी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन न हो विशेष रूप से तब जबकि वह समाज के कमजोर वर्ग से संबंध रखता/रखती हो और एक मजबूत और शक्तिशाली विरोधी के समक्ष कानूनी लड़ाई लड़ने में अक्षम हो। इन सबके बावजूद इन मामलों के तथ्यों ने महिला कामगारों की चिंता नहीं की बल्कि ये ऐसे ऐतिहासिक निर्णय थे जिन्होंने कामगारों के अधिकारों से संबंधित कानून के प्रगतिशील सिद्धांतों को स्थापित कर दिया जिन्हें जब और जैसी जरूरत हो महिला कामगारों तक भी विस्तृत किया जा सकता था।

एक निर्णय जिसने हजारों महिलाओं को, जो बार डांसरों की तरह काम कर रही थीं, काम करने से रोक दिया था, बांबे हाईकोर्ट ने बार डांसरों पर महाराष्ट्र में राज्य सरकार द्वारा लगाए गए उस निर्णय को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि यह निषेध बार डांसरों के जीवन और आजीविका के अधिकार का उल्लंघन करती थी।

महिलाओं के लिए रात्रि की पाली में काम करने पर निषेध के एक विवादास्पद मुद्दे पर मद्रास हाईकोर्ट ने प्रगतिशील निर्णय दिया यह घोषणा करते हुए कि कारखाना अधिनियम में महिलाओं पर रात्रि कालीन पाली में काम करने पर जो रोक लगायी गयी है वह असंवैधानिक है क्योंकि वह एक तरह से महिलाओं की आजीविका के अधिकार का खंडन करती है। निर्णय में रात्रिकालीन पाली के दौरान महिलाओं की सुरक्षा के लिए नियोक्ताओं द्वारा कुछ निर्धारित उपाय करने की जरूरत पर बल दिया गया। रात्रिकालीन पालियों में महिलाओं के काम करने पर रोक हमेशा से एक विवादास्पद मुद्दा रहा है क्योंकि राज्य

द्वारा उनकी सुरक्षा के लिए उनके काम की स्वतंत्रता को सीमित करते हुए यह निर्णय लिया जाता था।

सर्वोच्च न्यायालय ने 1997 में विशाखा एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य मामले में कामकाजी महिलाओं के यौन उत्पीड़न पर एक ऐतिहासिक निर्णय की घोषणा की। इस निर्णय में न्यायालय ने कहा कि कामकाजी महिलाओं का यौन उत्पीड़न एक तरह से जेंडर समानता के अधिकारों का सीधा उल्लंघन है। परिणामस्वरूप यह किसी व्यवसाय, पेशे और व्यापार को अपनाने के अधिकारों का भी उल्लंघन है।

निम्न अभ्यास को करते हुए अपने पढ़े हुए की प्रगति की जांच कीजिए।

**अपनी प्रगति की जाँच कीजिए**

1) कुछ कानूनों एवं योजनाओं के नाम बताइए जो संगठित क्षेत्र में कामगारों को सामाजिक संरक्षण प्रदान करते हों।

2) कुछ कानूनों एवं योजनाओं के नाम लिखिए जो असंगठित क्षेत्र में कामगारों को सामाजिक संरक्षण प्रदान करते हों।

3) कार्यस्थलों पर महिलाओं के अधिकारों पर कुछ ऐतिहासिक निर्णयों के नाम लिखिए।

कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक कानूनी उपायों पर हम अपनी चर्चा जारी रखेंगे जिसने महिलाओं को लाभ पहुंचाया है।

## 2.9 शिक्षा का अधिकार

सामाजिक संरक्षण और शिक्षा एक से अधिक आयामों से जुड़े हुए हैं। शिक्षा एक ऐसा हथियार है जिससे गरीबी को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में स्थानांतरित होने से रोका जा सकता है। ठीक ऐसे ही सामाजिक संरक्षण का उद्देश्य भी गरीबी और असमानता की समस्या से निबटना होता है जो भारत समेत तमाम देशों में सार्वभौमिक शिक्षा में बाधा बनकर खड़ी हैं। तमाम समूहों और एजेंसियों के सम्मिलित प्रयासों से, जिन्होंने दृढ़ता से यह सुनिश्चित करने का प्रयत्न किया कि लगातार बढ़ती गरीबी और मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न हो पाने की स्थिति में भी लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों और शिक्षा के लिए भुगतान कर पाने की क्षमता से बिना प्रभावित हुए भारत में सभी बच्चों को कम से कम न्यूनतम शिक्षा मिल सके, शिक्षा के अधिकार को पिछले दशक के दौरान बहुत बल मिला है। भारतीय राज्य भी मौलिक शिक्षा के प्रोत्साहन हेतु नियमित रूप से प्रावधानों और योजनाओं का निरूपण करते रहते हैं। (इस अधिनियम के बारे में और अधिक जानकारी आप इस खण्ड की अगली इकाई में पढ़ेंगे)।

1992 में सर्वोच्च न्यायालय ने मोहिनी जैन के मामले में कहा था कि शिक्षा का अधिकार एक मौलिक अधिकार है और प्रवर्तनीय है। 1993 में उन्नीकृष्णन वाले मामले में इस निर्णय के औचित्य पर और बड़ी पांच न्यायाधीशों की बेंच ने सुनवाई की और न्यायालय ने घोषणा की कि शिक्षा का अधिकार अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत प्रत्याभूत जीवन के अधिकार में अन्तर्निहित और उससे निःसृत है और यह कि 'एक बच्चे (नागरिक) को चौदह साल की उम्र तक मुफ्त शिक्षा पाने का अधिकार है।' इस निर्णय पर राज्य ने 2002 में एक संविधान संशोधन के माध्यम से प्रतिक्रिया करते हुए संविधान में अनुच्छेद 21-ए प्रविष्ट किया जो 6 से 14 वर्ष के बीच के बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान करता है।

वर्ष 2000 में, अंतर्राष्ट्रीय समुदायों द्वारा दुनिया के सबसे गरीब देशों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार लाते हुए विकास को प्रोत्साहित करने के लिए **सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों** का विकास किया। इसमें आठ ऐसे विकासात्मक लक्ष्य शामिल थे जिसे 2015 तक हासिल करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय सहमत हुआ था। प्रथमतः इन लक्ष्यों को संयुक्त राष्ट्र सहस्त्राब्दि घोषणा के माध्यम से अंगीकृत किया गया था।

शिक्षा पर भारतीय नीतियां भी वर्ष 2000 में विकसित किए गए सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों में से लक्ष्य 2 से प्रभावित हुईं, जो दरअसल सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य हासिल करने को लेकर था। इसका परिणाम यह हुआ कि वर्ष 2001-02 में **सर्व शिक्षा अभियान** को आरम्भ किया गया जो 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चों की शैक्षणिक जरूरतों को विभिन्न दृष्टियों से लक्षित करता था। इसमें नए स्कूल खोलना, स्कूलों का, कक्षाओं का निर्माण करना, स्कूल इमारतों का पुनरुद्धार या विस्तार करना और अन्य सुविधाएं जैसे पाठ्यपुस्तकें प्रदान करना इत्यादि शामिल थे। **शिक्षा गारण्टी योजना (ईजीएस)** और **वैकल्पिक और नवोन्मेषी शिक्षा (एआईई)** सर्वशिक्षा अभियान के प्रमुख घटक हैं जो स्कूल से निकल चुके बच्चों को बुनियादी शिक्षा के दायरे में लेकर आने पर केन्द्रित था। पहला घटक अर्थात ईजीएस ऐसे इलाकों को लक्षित करता था जहां 6-14 वर्ष की आयु के कम से कम 15-25 स्कूल न जा सकने वाले बच्चे हों और वहां निवास के एक किलोमीटर के घेरे में कोई औपचारिक स्कूल न हो, तब वहां इसके तहत स्कूल खोला जाता था। आपवादिक मामलों में जैसे कि सुदूर

पहाड़ी क्षेत्रों में स्कूल न होने के कारण स्कूल न जा सकने वाले 10 बच्चों के लिए भी ईजीएस के तहत स्कूल खोला जा सकता है। वहीं दूसरा घटक एआईई बुरी तरह से वंचित विशिष्ट कोटियों के बच्चों के लिए था उदाहरण के लिए, बाल श्रम, झुग्गी के बच्चों, प्रवासी बच्चों, कामगार बच्चों, कठिन परिस्थितियों में रहने वाले बच्चों और 9 वर्ष से अधिक आयु वाले बच्चों विशेषकर किशोर लड़कियों के लिए था जिनकी सहायता एआईई के तहत पूरे देश में की जा रही थी। 2004-05 में प्रारम्भिक शिक्षा कोष (पीएसके) की स्थापना की गई थी जिसके माध्यम से सभी प्रमुख केन्द्रीय करों पर 2 प्रतिशत का उपकर प्राप्त किया जाता था। इस कोष में आने वाली निधियों का उपयोग अनन्य रूप से सर्व शिक्षा अभियान और प्राथमिक शिक्षा को पोषणीय सहायता के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम (एनपी-एनएसपीई) अर्थात मध्यान्ह भोजन के लिए किया जा सकता था। इसके पश्चात मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने का बच्चों का अधिकार अधिनियम को 2009 में पारित किया गया और 1 अप्रैल 2010 से लागू हुआ। इसने बच्चों को शिक्षा प्रदान करने का विधिक आधार प्रदान किया और शिक्षा के अधिकार के क्रियान्वयन की रूपरेखा प्रदान की।

### मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा के लिए बच्चों का अधिकार (आरटीई) अधिनियम 2009

इस कानून की महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्न प्रकार से हैं:

- यह भारत के 6 से 14 वर्ष की आयु समूह के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करता है;
- किसी भी बच्चे को छोड़ा, निकाला या बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण करने की बाध्यता नहीं डाली जा सकती थी जब तक कि उसकी मौलिक शिक्षा पूरी न हो जाए;
- यदि 6 वर्ष से अधिक आयु के किसी बच्चे को किसी स्कूल में प्रवेश नहीं मिला है या फिर यद्यपि प्रवेश मिल गया है वह अपना/अपनी मौलिक शिक्षा पूरी नहीं कर पाता तो उसे उसकी आयु के अनुरूप वाली कक्षा में प्रवेश दिया जाएगा। ऐसे मामलों में बच्चे को अधिकार होगा कि वह कोई विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करे और मौलिक शिक्षा पूरी होने तक वह मुफ्त शिक्षा का हकदार होगा यद्यपि ऐसा करते हुए उसकी आयु 14 वर्ष से अधिक हो जाए;
- किसी भी बच्चे को उसकी आयु के साक्ष्य के अभाव में किसी स्कूल में प्रवेश देने से इन्कार नहीं किया जा सकता। जन्म प्रमाण पत्र या अन्य कागजात का प्रयोग बच्चे की आयु का निर्धारण करने के लिए किया जाएगा;
- कोई भी बच्चा जो प्राथमिक शिक्षा पूर्ण कर लेता है तो उसे इस आशय का प्रमाण पत्र प्रदान किया जाएगा;
- यह कानून सभी निजी स्कूलों में आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए कक्षा 1 में प्रवेश में 25 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान करता है;
- यह शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार का अधिदेश देता है;
- जहां कहीं स्कूल अवसंरचना में कमी है, उसे तीन वर्षों के भीतर सुधार लेना है यदि स्कूल ऐसा करने में असफल रहता है तो उसे दी गई मान्यता वापस ली जा सकती है; और
- मुफ्त शिक्षा के खर्चे का भार राज्य और केन्द्र सरकार के बींच बांट लिया जाएगा।

### शिक्षा और महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001

महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001 सरकारों को अधिदेश प्रदान करती है कि वह महिलाओं और लड़कियों के लिए शिक्षा तक समान पहुंच सुनिश्चित करे, भेदभाव उन्मूलन के लिए विशेष उपाय अपनाए, शिक्षा के सार्वभौमीकरण, निरक्षरता के उन्मूलन, जेंडर-संवेदित शिक्षण प्रणाली के सृजन, लड़कियों के नामांकन दर और अवधारण दर में वृद्धि और शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार सुनिश्चित करे जिससे जीवन पर्यन्त सीखना सुविधाजनक हो और इसके साथ ही महिलाओं के व्यवसाय/व्यापार/तकनीकी कौशल का विकास हो। इसके साथ ही माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा में जेंडर-अंतराल को कम करने को ध्यान केन्द्रित करने वाले क्षेत्र में चिन्हित है। नीति यह भी वादा करती है कि वह शैक्षणिक प्रणाली के हर स्तर पर जेंडर-संवेदी पाठ्यक्रम का विकास करेगी जिससे लैंगिक रूढ़िबद्धता को लक्षित किया जा सके जो कि जेंडर आधारित भेदभाव का सबसे प्रमुख कारण है।

### शैक्षणिक योजनाएं

बालिकाओं की शिक्षा के अधिकार का क्रियान्वयन इस प्रकार शिक्षा के अधिकार अधिनियम और महिला सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति 2001 (आप इस नीति के बारे में विस्तार से इस खण्ड की इकाई 4 में पढ़ेंगे) के अन्तर्संबंधों से प्रभावित हुआ। अपने नागरिकों में साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार ने कई योजनाएं प्रारम्भ कीं जैसे कि कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना, मध्यान्ह भोजन योजना और प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम (एनपीईजीईएल)। इस खण्ड की इकाई 3 शिक्षा का अधिकार अधिनियम और इसके क्रियान्वयन का समीक्षात्मक मूल्यांकन करेगी।

## 2.10 खाद्य एवं पोषण सुरक्षा

क्रयशक्ति में कमी, बढ़ते हुए ऋण, भयानक बेरोजगारी, प्राकृतिक आपदाओं (जैसे कि सूखा और बाढ़) और कुछ अन्य कारकों के कारण देश भर में लाखों लोगों के लिए भुखमरी वास्तविक और आसन्न खतरा बनी हुई है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में भोजन और पोषण सुरक्षा प्रमुख विकासात्मक लक्ष्य बना रहा है। खाद्य सुरक्षा की कोई भी सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत परिभाषा नहीं है। हालाँकि अधिकांश परिभाषाएं पर्याप्त और वहन करने योग्य पौष्टिक भोजन तक पहुंच पर केन्द्रित हैं।

**बॉक्स सं. 2.5**

> पोषण सुरक्षा का अर्थ है भिन्न-भिन्न प्रकार के भोजनों, जिसमें अनाज, दालें, तेल, मांस, दूध, अंडे, सब्जियां और फल शामिल हों, की उपलब्धता और वहनीयता के माध्यम से कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा और सूक्ष्म पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्राओं तक पहुंच होना जो एक व्यक्ति के लिए अपनी जीवन अवस्था में शारीरिक जरूरतों के अनुसार उसकी/उसके आवश्यकता को पूरा करती हो।

भारत ने खाद्यान्नों के मामले में आत्म निर्भरता 1970 के दशक में प्राप्त कर ली थी और तब से उसे निरंतर बनाए रखा है। परन्तु राष्ट्रीय स्तर पर खाद्यान्न सुरक्षा की प्राप्ति हो जाने के बावजूद गरीबों में भी सबसे गरीब तक इसकी पहुंच नहीं हो सकी है और दीर्घकालीन खाद्य असुरक्षा अभी भी बहुत उच्च है। आज, वैश्विक भूख सूचकांक में 119 देशों की सूची में भारत की स्थिति 94वें पायदान पर है। 43 प्रतिशत भारतीय बच्चे और 40 प्रतिशत महिलाएँ कुपोषित हैं। बाल मृत्यु में से 50 प्रतिशत का कारण कुपोषण होता है। इक्कीसवीं सदी के पहले दशक के मध्य में वयस्क महिलाओं में आधे से अधिक एनेमिक थीं और सभी

वयस्कों (पुरुष और महिला) में से एक तिहाई सामान्य से कम वजन के थे (लक्ष्मणन, 2010)। असंगठित क्षेत्र में उपक्रमों के लिए राष्ट्रीय आयोग के अनुसार (अर्जुन सेनगुप्ता रिपोर्ट) 77 प्रतिशत भारतीय प्रतिदिन 20 रूपये से कम में गुजारा करते हैं (एनसीईयूएस रिपोर्ट, 2009)।

हाल के वर्षों में पारिवारिक खाद्य सुरक्षा को लेकर नीति के मुख्य मुद्दे में अंतर आया है और खाद्य सुरक्षा के आंकलन में प्रति व्यक्ति कैलोरी अन्तर्ग्रहण का प्रयोग किया जाने लगा है। सरकार व्यापक स्तर पर विविधता वाले पोषण हस्तक्षेप कार्यक्रमों का क्रियान्वयन कर रही है जिससे कि व्यक्तिगत और पारिवारिक स्तर पर खाद्य सुरक्षा के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। ऐसे कार्यक्रमों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस), कई प्रकार के काम के बदले अनाज कार्यक्रम और अन्य मजदूरीजन्य रोजगार कार्यक्रमों के साथ-साथ ऐसे कार्यक्रम भी हैं जो सीधे महिलाओं और बच्चों को लाभ पहुंचाते हैं। इतना ही नहीं राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम (एनआरडीडब्ल्यूपी) जैसे कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के लिए, खाना बनाने के लिए और अन्य घरेलू आवश्यकताओं के लिए पानी की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित कर रहे हैं। इस मामले को लेकर केन्द्र सरकार की कुल आठ प्रमुख योजनाएं/कार्यक्रम संचालित हैं जिनका विवरण इस इकाई की **तालिका बी** में दिया गया है। 28 नवंबर 2001 को जारी किए गए एक महत्वपूर्ण अंतरिम आदेश में सर्वोच्च न्यायालय ने केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित 8 खाद्यान्न संबंधित योजनाओं के बारे में निर्देश जारी किया है। संक्षेप में उस आदेश में केन्द्र और राज्य सरकारों को उन योजनाओं को पूर्णतया आधिकारिक दिशानिर्देशों के अनुरूप क्रियान्वित करने का निर्देश दिया गया है। इस आदेश के प्रभाव से इन योजनाओं के अन्तर्गत मिलने वाला लाभ एक प्रकार से विधिक हकदारियों में बदल गया है।

सबसे महत्वपूर्ण चुनौती है कि सबसे नीचे की 30 प्रतिशत जनसंख्या के ऊर्जा अन्तर्ग्रहण को कैसे बढ़ाया जाए। मध्यम अवधि के लक्ष्य के तौर पर खाद्य अंतराल को वर्तमान में पड़े खाद्यान्न संग्रहों से पूरा किया जा सकता है और दीर्घकालीन लक्ष्य के लिए इस जनसंख्या समूह के लिए जॉब अवसरों में वृद्धि करके क्रयशक्ति में इज़ाफा करने की रणनीति अपनाई जा सकती है। इस बात की आवश्यकता भी है कि सरकार द्वारा शुरू किए गए विभिन्न खाद्य योजनाओं की क्षमताओं में सुधार किया जाए और इसे सबके लिए उपलब्ध, भ्रष्टाचार से मुक्त और शहरी क्षेत्रों के प्रति झुकाव से बचाया जाए।

### भोजन के अधिकार पर ऐतिहासिक निर्णय

अप्रैल 2001 में पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (पीयूसीएल, राजस्थान) ने भोजन के अधिकार को विधिक रूप से प्रवर्तनीय बनाने के लिए यह तर्क देते हुए सर्वोच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की कि संविधान के अनुच्छेद 21 में दिए गए जीवन की गारण्टी के मौलिक अधिकार में भोजन का अधिकार अन्तर्भूत है। यह याचिका ऐसे समय दायर की गई थी जब देश में खाद्यान्न का भण्डारण अभूतपूर्व स्तर (भारतीय खाद्य निगम के गोदामों में 6 करोड़ टन) तक पहुंच गया था जो वास्तव में 2 करोड़ टन के जरूरी बफर स्टॉक से 4 करोड़ टन अधिक था। फिर भी राष्ट्रव्यापी स्तर पर लोगों के भुखमरी से मरने की खबरें थीं, रिपोर्ट थी। याचिका में कई-कई मुद्दों को लक्षित किया गया था जैसे कि अपर्याप्त सूखा राहत, दीर्घकालीन भूख, प्रचण्ड कुपोषण, खाद्य संबंधित योजनाओं का क्रियान्वयन, भुखमरी से हो रही मौतें, सार्वजनिक वितरण प्रणाली का असफल हो जाना और साथ ही साथ पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के साधारण मुद्दे भी थे। इस याचिका पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने समय-समय पर भोजन के अधिकार के विविध पक्षों पर कई आदेश जारी किए हैं।

न्यायालय ने दृढ़तापूर्वक स्वीकार कर लिया कि भोजन का अधिकार भारत के संविधान में अनुच्छेद 21 द्वारा प्रत्याभूत गरिमा के साथ जीवन के मौलिक अधिकार का अभिन्न अंग है। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्देश जारी किया कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली की सभी दुकानें, यदि वे बंद हो गई हैं तो उन्हें एक सप्ताह के भीतर खोल दिया जाए। भारतीय खाद्य निगम को यह सुनिश्चित करने का आदेश जारी किया कि वह सुनिश्चित करे कि खाद्यान्न नष्ट न होने पाए। राज्यों को सरकारी योजनाओं जिसमें रोजगार आश्वासन योजना भी शामिल था को क्रियान्वित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई जिसे सम्पूर्ण ग्रामीण योजना, मध्यान्ह भोजन योजना, एकीकृत बाल विकास योजना, गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली गर्भवती महिलाओं के लिए मातृत्व लाभ योजना, 65 वर्ष से अधिक उम्र के निराश्रित व्यक्तियों हेतु राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, अन्नपूर्णा योजना, अन्त्योदय अन्न योजना, राष्ट्रीय परिवार कल्याण योजना और गरीबी रेखा से नीचे और गरीबी रेखा से ऊपर के परिवारों हेतु सार्वजनिक वितरण प्रणाली जैसी योजनाओं द्वारा मिलाकर चलाया जाना था।

ऐसे आदेश कार्य के लिए उपयोगी हो सकते हैं जिससे कि राज्य को सर्वाधिक वंचित और शोषित समुदायों को भोजन और पोषण सुरक्षा प्रदान करने के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी विशेष क्षेत्र में भुखमरी के कारण मौत की रिपोर्ट मिलती है या फिर किसी राशन की दुकान पर खाद्यान्न नहीं है या यदि राज्य सरकार प्राथमिक स्कूलों में मध्यान्ह भोजन के रूप में पका हुआ खाना परोसने में असफल रहता है तो सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों का उपयोग संबंधित अधिकारियों से अतिशीघ्र कदम उठाने के लिए कहने में हो सकता है।

### राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2011

भारतीय सरकार ने राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक प्रस्तुत किया। इसे 22 दिसंबर 2011 को लोकसभा में पेश किया गया परन्तु इसे भोजन पर संसदीय स्थायी समिति को संदर्भित कर दिया गया जिसने विधेयक के विभिन्न प्रावधानों पर विचार किया और भिन्न-भिन्न आलोचनाएं कीं। अधिनियम में 63 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या के लिए छूट प्राप्त खाद्य सुरक्षा का वादा किया गया था। अधिनियम के प्रावधानों और उनकी आलोचनाओं तथा जमीनी हकीकत के संदर्भ में नागरिक समाज द्वारा उठाई गई चिन्ताओं पर चर्चा हम इसी खण्ड की इकाई 3 में करेंगे।

### स्वास्थ्य और स्वास्थ्य देखभाल का अधिकार

भारत में भोरे समिति की रिपोर्ट, 1946 जिसने स्वास्थ्य सेवा के निवारात्मक और उपचारात्मक दोनों प्रकार्यों के संयोजन पर बल दिया था, ने स्वास्थ्य सेवा नीतियों की आधारशिला रखी। (सीईएचएटी, 1996)।

इसके पश्चात सरकार ने नौ योजना अवधियों के दौरान स्वास्थ्य योजनाओं और कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करते हुए स्वास्थ्य सेवा के प्रति एक नीति उपागम अंगीकृत कर लिया। इसके बावजूद निहायत ही अन्यायसंगत स्वास्थ्य प्रणाली ने उन लोगों को स्वास्थ्य सुविधा से वंचित कर दिया जो इसका खर्च वहन नहीं कर सके। हाल के वर्षों में एक तरफ तो स्वास्थ्य सेवा के निजीकरण की ओर कदम बढ़ाए जा रहे हैं जो स्वास्थ्य देखभाल तक गरीबों की पहुंच को स्पष्टतया नकारते हैं। वहीं दूसरी ओर नागरिक समाज समूह स्वास्थ्य सेवा के प्रति मानव अधिकार उपागम अपनाए हुए हैं और एक हकदारी तथा सकारात्मक अधिकार की तरह स्वास्थ्य सुविधाओं तक सभी लोगों की व्यापक और सार्वभौमिक पहुंच की मांग कर रहे हैं।

मानव अधिकार उपागम का प्रयोग करने का अर्थ है कि पात्रता सार्वभौमिक है जिससे कोई भी समूह किसी भी आधार पर चाहे वह क्रयशक्ति हो, रोजगार स्थिति हो, आवास, धर्म, जाति, जेंडर, अपंगता और भेदभाव का कोई अन्य कारण हो, उससे बाहर नहीं किया जा सकेगा। साथ ही साथ सार्वभौमिकता का यह अर्थ नहीं होगा कि वंचित और शोषित तथा कमजोर वर्गों जिन्हें सकारात्मक कार्यों के माध्यम से विशेष पात्रता की जरूरत हो, जिससे कि उनके द्वारा सही गयी किसी ऐतिहासिक या दीर्घावधि की असमानता को दूर किया जा सके, को किसी विशिष्ट सकारात्मक कदम से रोका जाएगा। भारत में स्वास्थ्य और स्वास्थ्य सेवा के अधिकार में निम्न बातों की आवश्यकता होगीः उपलब्धता, गैर-भेदभाव, भौतिक सुलभता, आर्थिक सुलभता, सूचना सुलभता और समानता।

आगे पढ़ने से पहले निम्न अभ्यास को हल कीजिए।

**अपनी प्रगति की जाँच कीजिए**

निम्नलिखित में से प्रत्येक के बारे में एक-दो पंक्तियों में लिखिए–

1) आर टी ई एक्ट 2009

2) राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम

3) स्वास्थ्य और स्वास्थ्य सेवा का अधिकार

4) महिला सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति, 2001

आने वाले परिच्छेद में राज्य द्वारा स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में किए गए हस्तक्षेपों के बारे में पढ़िए।

## स्वास्थ्य सेवा हेतु सरकारी योजनाएं और कानून

महिला सशक्तीकरण हेतु राष्ट्रीय नीति, 2001 निम्न परिप्रेक्ष्यों में महिलाओं की स्वास्थ्य को लेकर अपनी चिंता प्रकट करती है :

- महिलाओं के स्वास्थ्य को लेकर एक समग्रतामूलक दृष्टिकोण अंगीकृत किया जाए जिसमें पोषण और स्वास्थ्य सेवाएं दोनों शामिल हों और महिलाओं तथा बालिकाओं के जीवन-चक्र के सभी स्तरों पर विशेष ध्यान दिया जाए।
- शिशु मृत्यु दर और मातृ मृत्यु दर, जो मानव विकास के संवेदनशील संकेतक हैं, में कमी लाने को प्राथमिक चिंता बनाया जाए।
- एक व्यापक, आर्थिक रूप से वहन करने योग्य और गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवा तक महिलाओं की पहुंच होनी चाहिए।
- महिलाओं के प्रजनन अधिकारों को ध्यान में रखते हुए ऐसे उपाय अपनाए जाएं जिससे उन्हें एक ओर गर्भधारण करने और बच्चे जनने के संबंध में सूचित विकल्प अपनाने में सक्षम बनाया जा सके और दूसरी ओर देशज, संक्रामक और संचारी रोगों की जानकारी देते हुए लैंगिक और स्वास्थ्य समस्याओं से अवगत कराया जा सके।
- एचआईवी/एड्स और अन्य यौन संचारित रोगों के सामाजिक, विकासात्मक और स्वास्थ्य परिणामों के बारे में जेंडर परिप्रेक्ष्य से जानकारी दी जाए और उसे उसी संदर्भ में लक्षित किया जाए।
- जन्म और मृत्यु का पंजीकरण और विवाहों के अनिवार्य पंजीकरण को सख्ती से क्रियान्वित किया जाए जिससे कि शिशु और मातृ मृत्यु दरों और बाल विवाहों इत्यादि के बारे में सही आंकड़ा उपलब्ध हो सके और उन समस्याओं से निबटा जा सके।
- अपनी पसन्द के परिवार नियोजन के प्रभावी, सुरक्षित और वहनीय तरीकों तक पहुंच के लिए महिलाओं और पुरुषों दोनों की आवश्यकताओं का आंकलन हो और बाल विवाह तथा बच्चों के बीच अंतर जैसे मुद्दों को लक्षित किया जाए।
- स्वास्थ्य देखभाल और पोषण के बारे में महिलाओं के परंपरागत ज्ञान की पहचान हो तथा उसे प्रोत्साहन दिया जाए।
- महिलाओं के लिए उपलब्ध सम्पूर्ण स्वास्थ्य अवसंरचना के ढांचे के अंतर्गत ही भारतीय और अन्य वैकल्पिक चिकित्सा प्रणालियों को बढ़ावा दिया जाए जिससे उपलब्धता बढ़े।

विशेषकर महिलाओं, बच्चों और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले गरीबों को स्वास्थ्य सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से 2005 में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) की शुरुआत की गई। यह स्वास्थ्य के अत्यावश्यक निर्धारकों को समाहित करता है जैसे कि पोषण, स्वच्छता, आरोग्यशास्त्र और सुरक्षित पेयजल। इसका **सर्वप्रमुख लक्ष्य है शिशु और मातृ मृत्यु दर में कमी लाना, संचारी और गैर-संचारी बीमारियों की रोकथाम इत्यादि।** इसकी उपलब्धि यह रही कि यह कार्यक्रम शिशु मृत्यु दर को 2005 में 58 से कम करके 2009 में 50 तक लाने और 2005-06 में 1.08 करोड़ संस्थागत जन्म से बढ़कर 2009-10 में संस्थागत जन्म 1.62 करोड़ हो गया। 2005 में ही आरम्भ की गई जननी सुरक्षा योजना (जेएसवाई) एनआरएचएम के अन्तर्गत ही सुरक्षित मातृत्व हेतु हस्तक्षेप है। इसका क्रियान्वयन इस लक्ष्य के साथ किया जा रहा है कि गरीब गर्भवती महिलाओं में संस्थागत जन्म को प्रोत्साहित करके मातृ मृत्यु दर और शिशुजन्म से पूर्व होने वाली मातृ मृत्यु में कमी लायी जाए।

भारत में महिलाओं से संबंधित कुछ सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्वास्थ्य सेवा कानूनों में द मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रिगनेन्सी एक्ट 1971 और गर्भधारणपूर्व और प्रसवपूर्व निदान तकनीकी (नियमन और दुरुपयोग का निरोध) अधिनियम 1994 (पीसीपीएनडीटी) शामिल हैं जो प्रजनन स्वास्थ्य के मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। हालाँकि स्वास्थ्य संबंधी कई अन्य पहलुओं जैसे कि आकस्मिक स्वास्थ्य देखभाल का अधिकार, एचआईवी/एड्स, चिकित्सा अभ्यास देखभाल, चिकित्सकीय लापरवाही, औषध और सार्वजनिक स्वास्थ्य, व्यावसायिक स्वास्थ्य और सुरक्षा, मानसिक स्वास्थ्य सेवा, वातावरण और स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्य और कैदियों इत्यादि पर विधिक कानूनों और न्यायालय के निर्णयों के संयोजन उपलब्ध हैं। इन सभी निर्देशों और आदेशों का प्रभाव महिलाओं पर भी पड़ता है।

## ऐतिहासिक निर्णय

एक मामले (डॉ. उपेन्द्र बक्शी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1983) 2 एससीसी 308) में सर्वोच्च न्यायालय ने महिलाओं के लिए राज्य संरक्षण गृहों में रहने वाली महिलाओं के मानवाधिकारों को प्रवर्तित किया और मानसिक स्वास्थ्य के पहलुओं पर दिशानिर्देश दिया। एक दूसरे मामले (उदाहरण के लिए, देखिए हरियाणा राज्य बनाम श्रीमती संतारा एआईआर 2000 एससी 1888 और अच्युतराव हरिभाउ खोड़ा बनाम) में, जिसमें रांची के नजदीक एक मानसिक चिकित्सालय की स्थितियों का संबंध था, यह पाया गया कि महिला मरीजों को इलाज हो जाने और ठीक हो जाने के बाद भी छोड़ा नहीं जाता था। अस्पताल और राज्य प्रशासन के प्राधिकारियों ने दावा कि यद्यपि महिला मरीजों के ठीक हो जाने के बाद और उनके रिश्तेदारों को इस आशय की सूचना दे दिए जाने के बाद भी उन्हें वापस परिवार में स्वीकार नहीं किया जाता। सर्वोच्च न्यायालय ने ऐसी महिलाओं के लिए जिन्हें मानसिक चिकित्सा के बाद उनके परिवारों में स्वीकार नहीं किया जाता, एक पुनर्वास केन्द्र की स्थापना का निर्देश दिया। इसी तरह चिकित्सकीय लापरवाही के कारण असफल बंध्याकरण के मामले में न्यायालय ने गर्भावस्था/बच्चे के जन्म के लिए मुवाअजे का आदेश दिया था।

व्यावसायिक सुरक्षा के मुद्दे पर सर्वोच्च न्यायालय ने एशियाड विनिर्माण कामगारों के मामले में निर्देश दिया कि राज्य यह देखने के लिए संवैधानिक दायित्व से बंधा हुआ है कि किसी भी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन न हो और विशेष रूप से यदि वह व्यक्ति समाज के कमजोर वर्ग से संबंध रखता हो और अपना शोषण करने वाले मजबूत और ताकतवर विरोधी के खिलाफ कानूनी लड़ाई लड़ने में अक्षम हो। न्यायालय ने विभिन्न कानूनों के उचित क्रियान्वयन हेतु निर्देश दिया जिसमें मातृत्व लाभ से संबंधित कानून और खान शिशुगृह नियम 1966 शामिल हैं।

चिकित्सा तकनीकों के दुरुपयोग के मुद्दे पर सर्वोच्च न्यायालय ने सेहत (सीईएचएटी) बनाम भारत संघ के मामले में एक ऐतिहासिक निर्णय दिया। इस मामले में एक सक्रिय कार्यकर्ता साबू जॉर्ज के साथ गैर-लाभकारी संगठनों सेहत और मासूम ने सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष एक जनहित याचिका दायर की थी। इस याचिका में कहा गया था कि पीसीपीएनडीटी अधिनियम को उचित ढंग से क्रियान्वित नहीं किया जा रहा जिसके चलते देश में बालिका शिशु लिंगानुपात में गिरावट आती जा रही है। एक्ट का उचित कार्यान्वयन कर पाने की असफलता के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने केन्द्र और राज्य सरकारों के खिलाफ कठोर शब्दों में निन्दा जारी की और लगे हाथ कानून के प्रावधानों के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु न्यायिक आदेश भी जारी किए। इस कानून के कार्यान्वयन से संबंधित समस्याओं पर और विस्तार से चर्चा इस खण्ड की इकाई 3 में की जाएगी।

हालाँकि निर्णयों ने स्वास्थ्य और स्वास्थ्य सेवा हेतु महिलाओं के अधिकार का समर्थन किया और बार-बार उसे दोहराया परन्तु सभी निर्णय सकारात्मक भी नहीं रहे। उदाहरण के लिए,

न्यायालयों द्वारा प्रतिरोधी जनसंख्या नीतियों को वैध स्वीकार कर लिया है बावजूद इसके कि इनका महिलाओं के सशक्तीकरण पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ता है।

आगे पढ़ने से पहले अपनी समझ का मूल्यांकन करें।

**अपनी प्रगति की जाँच कीजिए**

1) शिक्षा के अधिकार मुद्दे पर सरकार द्वारा उठाए गए प्रमुख कदमों के बारे में लिखिए।

2) खाद्य और पोषण सुरक्षा पर सरकार की प्रधान योजनाएं कौन-कौन सी हैं?

3) भोजन के अधिकार पर ऐतिहासिक निर्णयों के नाम लिखिए। ये क्या कहते थे?

4) स्वास्थ्य और स्वास्थ्य देखभाल के प्रति मानवाधिकार उपागम का क्या अर्थ है?

5) स्वास्थ्य और स्वास्थ्य देखभाल के अधिकार के ढांचे के महत्वपूर्ण संघटक क्या हैं?

## 2.11 सारांश

संवैधानिक प्रावधान राज्यों को स्पष्ट अधिदेश देते हैं कि शोषित और वंचित समूहों को सामाजिक संरक्षण के अन्तर्गत लाया जाए। संरक्षण प्रदान करने के लिए कई प्रकार की योजनाएं, कार्यक्रम, नीतियां और कानून निर्मित किए गए हैं। ऐतिहासिक निर्णय दो स्तरों पर कार्य करते हैं: अ). वे कानूनों का अन्यार्थ बताते हैं और अधिकारों की प्रत्याभूति को अर्थ प्रदान करते हैं; और ब) वे राज्य को निर्देश देते हैं कि जनसंख्या के कमजोर वर्गों के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन करे और राज्य प्रशासन द्वारा लागू की जा रही विभिन्न योजनाओं, कार्यक्रमों और कानूनों के कार्यान्वयन की निगरानी करे। शिक्षा का अधिकार, काम का अधिकार और काम में अधिकार पर दिए गए ऐतिहासिक निर्णय पहले स्तर के उदाहरण हैं जबकि भोजन के अधिकार और पीसीपीएनडीटी अधिनियम के कार्यान्वयन दूसरे स्तर के उदाहरण हैं। आर्थिक वैश्वीकरण की प्रक्रियाएं, सामाजिक क्षेत्र का निजीकरण (जैसे कि स्वास्थ्य और शिक्षा क्षेत्र), अपर्याप्त बजट आवंटन, भ्रष्टाचार, कानूनों, नीतियों और योजनाओं को लागू करने में राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी और विशेष आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना जहां श्रम कानूनों को मुल्तवी रखा जाता है कुछ ऐसी चुनौतियां हैं जिनका सामना, नागरिकों के सामाजिक संरक्षण के अधिकारों को सुनिश्चित करने में करना पड़ता है।

## 2.12 सन्दर्भ


Bhasin, Lalit (2007). Labour and Employment Laws of India, available at http://www.mondaq.com/article.asp?articleid=50440, accessed on 27 January 2009.

Bhole. (1994)'Unemployment Alleviation Programmes in India: A Review and Prospects under the New Economic Policy', *The Indian Journal of Labour Economics* Vol. 37 No. 2.

Duggal, Ravi (2007) Right to Health and Healthcare: Theoretical Perspectives in Mihir Desai and Kamayani Bali Mahabal, Healthcare Case Law in India: A Reader, Mumbai: CEHAT and India Centre for Human Rights and Law.

Income Generating Programmes for Poverty Alleviation through Non-Formal Education: IGP Country Report – India, UNESCO, Bangkok, 2003, available at http://unesdoc.unesco.org/images/0013/001318/131810e.pdf, accessed on 17 March 2012.

Jesani Amar, (1996). *Laws and Healthcare Providers: A Study of Legislation and Legal Aspects of Healthcare Delivery,* CEHAT, 1996, available at http://www.cehat.org/go/uploads/Lhcp/lhcp.pdf, accessed on 10 March 2012.

Justice S. Muralidhar. The Expectations and Challenges of Judicial Enforcement of Social Rights, available at delhidistrictcourts.nic.in/ejournals/**Social_Rights**_Jurisprudence.pdf, accessed on 1 March 2012.

Lux, Lakshmanan (2010). India's Food Security Challenge, **The Hindu**, 4 January.

Sharma, Amita (2010). *Rights-based Legal Guarantee as Development Policy: The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act.* NREGA-UNDP Discussion Paper No. 2.

Mahadevia, Darshini and Shah, Pooja(2009). Inclusive Urbanization -Social

Protection for the Slum and Pavement Dwellers in India: A presentation at SPA Annual Research Workshop, Hanoi, 3-4 June 2009, available at www.socialprotectionasia.org/Conf-prgram-pdf/3_June-Darshini.pdf, accessed on 10 March 2012.

National Food Security Act (2010): An Introductory Primer on the Legal Guarantees Demanded by the Right to Food Campaign, Right to Food Campaign Secretariat, New Delhi, Aug 2010.

Neelakantapilla, Vyshnavi (2010). Labour Rights under the Indian Constitution, available at http://www.lawyersclubindia.com/articles/Labour-Rights-under-the-Indian-constitution-3300.asp, accessed on 5 March 2012.

Pilla, Sudha(2011). The Social Protection Floor in India, Planning Commission of India, available at www.icsw.org/doc/2011-Social-Protection-Floor-in-India.doc, accessed on 19 March 2012.

Sharma, Parul (2007). Split Legal Regime in India's Labour Laws, Journal for Sustainable Development, , available at http://www.southasiaexperts. se/pdf/Indian%20Labour%20Law%20PDF.pdf, accessed on 27 January 2009.

Sircar, Oishik (2007). The Trade-off Between Protection and Freedom, Infochange News and Features, June 2007, available at http://infochangeindia.org/20070517179/Women/Analysis/The-trade-off-between-protection-and-freedom.html , accessed on 5 December 2009.

Sood, Deepika, Indian Perspective on Right to Health, available at http://www.legalindia.in/indian-perspective-of-right-to-health, accessed on 14 March 2012.

Sudarshan, Ratna M.(2009). 'Examining India's National Regional Employment Guarantee Act: Its Impact and Women's Participation', Social Protection in Asia Working Paper Issue 05, May.

Vyas, Aparna. Food Security in India, available at http://theviewspaper.net/food_security_in_india/, accessed on 4 March 2012.

## 2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Five Year Strategic Plan 2011-2016: Towards a New Dawn, Ministry of Women and Child Development, Government of India, available at http://wcd.nic.in/MWCD_Strategic_Plan_10-02-2011.pdf, accessed on 15 March 2012.

Millenium Development Goals – India Country Report 2011, Central Statistical Organization, Ministry of Statistics and Programme Implementation, Government of India, available at

http://www.in.undp.org/content/dam/india/docs/mdg_india_2011.pdf, accessed on 20 March 2012.

National Policy for the Empowerment of Women, Ministry of Women and Child Development, Government of India, available at 2001 http://wcd.nic.in/empwomen.htm, accessed on 15 March 2012.

Perspectives on Poverty in India: Stylized Facts from Survey Data, The World Bank, Washington, 2011.

Report on Employment and Unemployment Survey 2009-10, The Labour Bureau, Ministry of Labour and Employment, Government of India, October 2010.

Report of the National Commission on Enterprises in the Unorganized Sector (NCEUS), 2006 available at www.nceus.com/reports/socialsecurity2006, accessed on 5 March 2012.

Report of the National Commission on Enterprises in the Unorganized Sector 2009: Skill Formation and Employment Assurance in the Unorganized Sector.

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

**Table B: Government Schemes on Food and Nutrition Security: An Overview**[1]

| Name of Scheme | Targeted group | Identification of Beneficiaries | Entitlement | Comments |
|---|---|---|---|---|
| Annapoorna Yojana | Destitutes above 65 years of age and not covered under state or central social security pension scheme. | Gram sabhas in rural areas and local bodies in urban areas to carry out the identification of these destitute. | 10 kg food grains per card per month, free of cost | It appears that Annapurna has been discontinued in some states. This is a violation of Court orders and the matter has been taken up in the Supreme Court by the Commissioners. |
| Antyodaya Anna Yojana | Poorest of the poor in rural and urban areas. They are issued special yellow ration cards | Gram sabhas in rural areas and local bodies in urban areas carry out identification from amongst the poor families within the state. | Rs. 2/kg for wheat and Rs. 3/ kg for rice, 25 kg food grain per family per month, through the PDS | The Supreme Court has directed the Government of India to provide Antyodaya cards to all Primitive Tribal people. |
| Family Benefit Scheme | BPL Families who have lost their primary bread winner | Identification done with the assistance of panchayats | A lump sum amount of Rs. 10,000 | |
| Targeted Public Distribution Scheme | Primarily, below poverty line families | Through a 'BPL Survey' conducted once in five years | Differs across states, and in most cases it is 35 kgs per family per month, at rates prescribed by the govt. | |
| Integrated Child Development Scheme | Pre-school children, adolescent girls, pregnant and lactating women | This is a universal scheme; any person who is in the target group is eligible to receive the benefit of these services. It aims at reducing the incidence of mortality, morbidity and malnutrition in children & adolescent grils and enhancing the capability of mother to look after the health and nutritional needs of the children | includes immunisation, supplementary nutrition, health and nutrition education, growth monitoring, pre-school education and referral services. | It is the only programme that extends from pregnant women and nursing mothers to cover infants and children up to the age of six; is a major tool to secure children's right to food |

[1] **Source:** http://www.righttofoodindia.org/schemes/scheme.html, accessed on 18 March 2012

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| Maternity Benefit Scheme | BPL women during their first two live births | Selection happens through primary health care centre | Rs. 500, as one time entitlement. | |
| Mid-Day Meal Scheme | All children in government and aided primary schools upto Std VIII | This is an universal scheme, and all children are eligible to receive cooked meals | Fresh cooked meal on each working day, with the stipulated, nutritive and calorific value, for at least 200 days in a year. | |
| Pension schemes: Indira Gandhi National Old Age Pension Scheme (IGNOAPS), Indira Gandhi National Widow Pension Scheme (IGNWPS), Indira Gandhi National Disability Pension Scheme (IGNDPS) | Destitute aged, widows, and disabled | Identification is done through Panchayati Raj bodies | Amount differs in each state with, minimum of Rs. 75 / month. Under IGNOAPS, Central government provides Rs. 200/- per month and state governments contribute Rs. 200-1000 a month. Under IGNWPS and IGNDPS, central government contributes Rs. 200 per month with an equal contribution from the state government. | |